चन्दामामा
माँ - बच्चों का मासिक पत्र
SANKAR

Photo by P. R. Shinde

पुरस्कृत परिचयोक्ति

संभलकर चलना !

प्रेषक
तेजेश्वर शर्मा, सिरोही

देश विदेश की लोक-कथाएं

इस पुस्तक में सरल भाषा में एक से एक बढ़िया १६ कहानियां और ४० से अधिक चित्र हैं।

रु.१

भारत की लोक-कथाएं

भारत के विभिन्न प्रान्तों की प्रसिद्ध २२ लोक-कथाओं के इस संग्रह में ५० चित्र भी हैं।

मनोरंजक कहानियां (प्रेस में)

इस संग्रह में मजेदार हंसा-हंसा कर लोट-पोट करने वाली १६ कहानियां और ६० चित्र हैं।

रु.१

पब्लिकेशन्स डिवीज़न

ओल्ड सेक्रेटेरियट, दिल्ली-८

बिड़ला
कटेली चम्पा
केश तैल
अनुपम गन्ध
एवं केश शोभा
केलिये

वीर-बच्चा
बच्चों की ताकत के लिये
अनुपम टानिक
बिड़ला लेबोरेटरीज, कलकत्ता ३०

फ़ाउन्टेन कलम और स्याही
के लिए संसार भर में मशहूर
पायलट्
है।
फिर से आजकल
हिन्दुस्तान की
हर जगह पर
मिलने लगी हैं
श्रेष्ठता
के लिए
गारंटी है।
PILOT INK
MANUFACTURED BY
THE PILOT PEN CO. (INDIA) LTD.
CATHOLIC CENTRE, MADRAS-1

चन्दामामा

विषय - सूची

*

चन्दामामा

संचालक: चक्रपाणी

भारत की भाषाओं में बाल-साहित्य का क्या स्थान है? क्या वर्तमान भारतीय बाल-साहित्य का पश्चिमी साहित्य के सांचे पर निर्माण हो रहा है? ये प्रश्न आजकल प्रायः पूछे जा रहे हैं। परन्तु यह कहना होगा कि भारतीय बाल-साहित्य उतना विस्तृत और उन्नत नहीं है, जितने कि इसके अन्य भाग हैं।

भारतीय बाल-साहित्य का स्रोत साधारणतः लोक कथायें हैं। और लोक कथाओं का जन जीवन से निकटतम सम्बन्ध है। इसलिये "चन्दामामा" में हम अक्सर देश-विदेश की लोक कथाओं को देने का प्रयत्न करते आ रहे हैं। हम आशा करते हैं कि ये समाज के लिये विशेषतः उपयोगी होंगे।

वर्ष : 6 | अप्रैल 1955 | अङ्क : 8

शर्त

अनन्तपुर में रहता था इक
रामलाल नामक चालाक;
चौराहे पर बैठ एक दिन
उसने यही लगायी हाँक—

"सुनो, सुनो, हाँ सुनो भाइयो
अद्भुत एक बताता बात;
सुनो भाइयो, दिखलाऊँगा
छोटी मुरगी के मैं हाथ !"

जमा हो गये लोग बहुत से
लगे पूछने 'कहाँ' 'कहाँ' सब;

"शर्त लगाओ औ' रुपये सौ
रख दो पहले, दिखलाऊँ तब;

अगर कहीं मैं हार गया तो
लौटा दूँगा निश्चय ही धन !"
सुनते ही यह रुपये घर से
ले आये झट वहाँ सभी जन।

"पाँच-सात से अच्छा होगा
सोच-समझ आगे सब आयें !"–
रामलाल ने कहा निडर यह
तो उत्सुक सब जन बढ़ आये,

बोले—"भाई यह धन ले लो,
दिखलाओ मुर्गी के हाथ !"

सुनकर क्रुद्ध रामलाल तब
"वाह वाह, अब आओ साथ!"

इतना कह वह चला वहाँ से
साथ सभी लोगों को कर,
रुका वहीं वह जहाँ एक थी
मुर्गी कूड़े की ढेरी पर।

"देखो, आँखोंवालो देखो,
दिखा रहा मुर्गी के हाथ!"
इतना कह उस ओर उठाकर
दिखा दिये उसने निज हाथ।

सुनते ही यह उबल उठे तब
गुस्से में सब एक साथ,

* * *

किन्तु धूर्त ने कहा तुरत ही-
"दिखा दिये मुर्गी के हाथ;

इतनी ही थी शर्त हमारी
भूल गये क्यों मेरी बात?
हाथ दिखाने पर मुर्गी के
रही जीत की मेरी बात!"

हार मानकर लोगों ने तब
सौ रुपये दे दिये शर्त के,
विजय-गर्व से मूँछ ऐंठते
लगे पुलकने प्राण धूर्त के।

मुख-चित्र

यह तो पहिले ही बता दिया गया है कि पाँडव जुए में हार गये थे, और दुर्योधन ने उन्हें बन में भेज दिया था। पाँडव वनवास जाने से पहिले कुछ दिन द्वैतवन में रहे। फिर बाद में "काम्यक" जङ्गल में जाकर रहने लगे।

अर्जुन को यह भलीभाँति मालूम था कि वनवास या अज्ञातवास के बाद दुर्योधन के साथ युद्ध अवश्यम्भावी है। इसलिये युद्ध में विजय पाने के हेतु वह दिव्यास्त्र प्राप्त करने के लिये तपस्या करने लगा।

इन्द्रकील पर्वत पर अर्जुन ने घोर तपस्या की। परमेश्वर प्रसन्न हो पार्वती के साथ किरात वेष में आये, और अर्जुन की परीक्षा लेनी चाही।

इस परीक्षा के लिये "मूकुण्ड" नाम का राक्षस जङ्गली सूअर का वेष धारण कर अर्जुन की तपस्या भङ्ग करने निकला। अर्जुन ने उसको एक ही बाण से मार दिया। उसी समय किरात ने भी बाण छोड़ा। तब वे दोनों आपस में झगड़ने लगे।

"यह सूअर मैंने मारा है, मैंने मारा है।"—किरात और अर्जुन के बीच घमासान युद्ध हुआ। शिव और अर्जुन के युद्ध के बारे में फिर कहना क्या! तीनों लोक हिलने लगे। बाण-वर्षा होने लगी।

बहुत देर तक युद्ध चलता रहा। आखिर किरात ने बाण से अर्जुन के गाँडीव की प्रत्यंचा तोड़ दी।

यह देख अर्जुन को बहुत आश्चर्य हुआ। चूँकि उसके गाँडीव की प्रत्यंचा और कोई नहीं तोड़ सकता था, सिवाय स्वयं परमेश्वर के; तुरंत उसने मुस्कुराते हुए परमेश्वर को सामने खड़ा पा पहिचान लिया और नमस्कार किया।

अर्जुन ने शिवलिंग की स्थापना कर उसकी पूजा के समय जो फूल चढ़ाये थे, वे सब परमेश्वर के सिर पर दिखाई दे रहे थे। इसलिये अर्जुन जान गया कि वे निश्चय ही भगवान हैं। परमेश्वर ने अर्जुन की तपस्या की प्रशंसा की, और उसको "पाशुपतास्त्र" देकर अदृश्य हो गया।

वंश गौरव

बुन्देलखण्ड में ठाकुर वंश का एक आदमी रहा करता था। उसको हर कोई "दीवान साहब" कहकर पुकारता था। उसको करने तो रहते थे फाके, पर ठाट थे रईसी के। कोई काम धन्धा भी न था। अपने वंश के बड़प्पन के बारे में डींग मारता और दूसरों का समय खराब करता।

दीवान साहब सड़क पर खड़े हो, एक सेठ से बातचीत कर रहा था कि दूर से एक गाड़ी आती दिखाई दी। गाड़ी में ऊपर तक चावल की बोरियाँ रखी हुई थीं। वह गाड़ी उन्हीं की तरफ़ आ रही थी। गाड़ी को देखते ही दीवान साहब ने कहा—"अरे! वह कितना बड़ा हाथी है। हमारे दादा के पास इतना ही बड़ा हाथी हुआ करता था।"

"शायद आप गलत देख रहे हैं, दीवान साहब! हाथी नहीं आ रहा है, बल्कि चावल के बोरों से लदी गाड़ी चली आ रही है।"—सेठ ने कहा।

"लगता है, आपकी आँखें खराब हो गई हैं, साफ़ हाथी जो दिखाई दे रहा है!"—दीवान साहब ने कहा।

"माफ़ कीजिये, वह चावलों की ही गाड़ी है।"—सेठ ने फिर कहा।

दीवान साहब ने भी जिद पकड़ ली।

"अगर वह हाथी हुआ तो मैं आपका सिर धड़ से अलग कर दूँगा। गाड़ी हो तो आप मेरा सिर काट दीजिये। रही हम दोनों के बीच में यह शर्त!"—दीवान साहब ने शान से मूँछे ऐंठते हुये कहा।

थोड़ी देर में गाड़ी पास आ गई।

"देखा दीवान साहब! आप हार गये हैं!"—सेठ ने कहा।

चि. सुषमा कुमारी

"हाँ, आप हमारा सिर काट दीजिये।"—दीवान साहब ने कहा।

"जाने भी दीजिये। इसकी क्या ज़रूरत है।"—सेठ ने यह सोचकर कहा कि कम से कम अब तो ठाकुर अपने वंश की डींग मारना छोड़ देगा।

"नहीं, आप शर्त के मुताबिक़ हमारा सिर काट दीजिये। हमारे ठाकुर वंश के लोग कहे को नहीं मुकरते हैं।"—दीवान साहब ने आग्रह किया।

"इस बारे में पंचायतदार से सलाह-मशवरा करना अच्छा मालूम होता है।"—सेठ ने सुझाया। दोनों पंचायतदार के पास गये। उसने यों फ़ैसला दिया—

"यह बात तो सच है कि दीवान साहब के सिर पर सेठ का अधिकार है। परन्तु वे अब चाहें, उसको काट सकते हैं।

यह फ़ैसला सुन सेठ सन्तुष्ट हुआ, परन्तु दीवान साहब ने एक और उलझन पैदा कर दी।

"यानी मेरे सिर के पालन-पोषण की ज़िम्मेवारी अब से सेठ पर है।"—दीवान साहब ने कहा।

सेठ के सामने और कोई चारा नहीं था। दीवान साहब के सिर की रक्षा का भार अपने ऊपर ले लिया। यह कोई हल्का भार न था। दीवान साहब अपनी ख़ानदान की शान निभाता हुआ दिन काटने लगा, और इधर साहुकार का घर ख़ाक होने लगा।

कुछ समय इस तरह बीता। सेठ ने इस आफ़त से पिंड छुड़ाने के लिये अपने दोस्तों से विचार-विनमय किया। आखिर उन्हें एक तरीका सूझा। सेठ को उन्होंने वह बता भी दिया।

अगले दिन कोई आदमी गली में यह चिल्लाता हुआ आया—"हम नाक और कान खरीदते हैं!" सेठ ने उस आदमी को बुलाकर पूछा—"तुम क्या खरीदते हो?"

"बाबू! हम मनुष्यों के नाक और कान खरीदते हैं।"—उसने कहा।

"क्या दाम दोगे?"—सेठ ने पूछा।

"अगर अच्छे खानदान के हुये तो नाक और कान के लिये पाँच सौ रुपये तक भी दे देते हैं।"—उस आदमी ने बताया।

सेठ ने दीवान साहब को लाकर कहा—"ये मशहूर ठाकुर वंश के हैं। फ़िलहाल इनका सिर मेरा है। इसलिये पाँच सौ रुपये देकर इनके नाक, कान काट लो।"

दीवान साहब घबरा गया।

"सेठ साहब! यह ठीक नहीं है।"—दीवान साहब ने कहा।

"क्यों ठीक नहीं है? यह सिर मेरी संपत्ति है। इतना रुपया बरबाद कर मैं जो इसको खिला-पिला रहा हूँ।"—सेठ ने कहा।

"अच्छा होगा, अगर हम पंचायतदार के पास जाकर उनकी सलाह लें।"—दीवान साहब ने सुझाया।

दोनों फिर पंचायतदार के पास गये।

"सेठ को ज़रूर आपके नाक, कान बेचने का अधिकार है। आपके सिर को उन्होंने इतने दिनों से पाला-पोसा भी तो है। इसलिये जितना खर्च आप पर सेठ ने किया है, आप को वापिस देना होगा।"—पंचायतदार ने फ़ैसला दिया।

दीवान साहब के मुँह से एक बात भी न निकली। जो कुछ सम्पत्ति बाकी थी, उसे बेच-बाचकर सेठ का कर्ज़ा चुका दिया, और गाँव छोड़कर कहीं चला गया।

चौथा चोर

एक देश में तीन पहुँचे हुये चोर रहा करते थे। वे यद्यपि रोज़ चोरी करते थे, तथापि उनको कोई पकड़ नहीं पा रहा था। उनका नाम लेते ही रईसों के दिल थम जाते थे। राजा ने उनको पकड़ने की ठानी। इसलिये वह हर रात चोर का वेष पहिन उनकी तलाश में फिरता।

इस तरह एक एक करके कई रात्रियाँ गुज़र गईं। घूमते घूमते वह ऐसी जगह, अन्धेरे में पहुँचा, जहाँ चोर रहा करते थे। जब राजा वहाँ गया, तो वे यह सोच रहे थे कि चोरी कैसे की जाय।

नये चोर को देखते ही उन तीनों को कुछ सन्देह-सा हुआ। "तुम कौन हो? यहाँ किस काम पर आये हो?"—उन्होंने पूछा।

"मैं भी चोर हूँ। यह सुन कि तुम इस इलाके के मशहूर चोर हो, मैं भी अपना हुनर तुम्हें दिखाने आया हूँ।"—राजा ने कहा।

चोरों ने हँसकर पूछा—"क्या तुमने किसी के मुँह हमारी शक्ति के बारे में सुना है?"

"नहीं तो, कहो, मैं सुनना चाहता हूँ।"—राजा ने कहा।

"चाहे कितना भी बड़ा ताला हो, मैं मिनटों मिनटों में एक तिनके से खोल सकता हूँ।"—पहिले चोर ने कहा।

"मैं ज़मीन पर हाथ से टटोल-टटोलकर यह बता सकता हूँ कि पैसा कहाँ है।"—दूसरे चोर ने बताया।

"अगर एक बार एक आदमी को देख लूँ, तो फिर चाहे वह कोई भी वेष पहिने, मैं उसको तुरंत पहिचान सकता हूँ"—तीसरे चोर ने कहा।

श्रीमती डी. मंजुलता

"भला तुम में क्या हुनर है?"—तीनों चोरों ने राजा से पूछा।

राजा को कुछ न सूझा कि क्या कहे। आखिर उसने यों कहा—

"अगर मैंने अपनी छोटी अंगुली नीचे की, तो किसी को भी यमलोक पहुँचा सकता हूँ; और अगर मैंने दूसरी अंगुली ऊपर उठाई, तो मौत के मुँह में पड़े हुये आदमी भी छोड़ दिये जाते हैं।"

यह सुन तीनों चोर बड़े खुश हुये। उन्होंने सोचा कि एक अक़्लमन्द, ताकतवर, और चालाक आदमी उनका साथी हो गया है।

"अब कहाँ चोरी के लिये जाया जाय?" —राजा ने पूछा।

"तुम्हारी मर्ज़ी! जो जगह तुम चुनोगे, वहीं हम चलने के लिये तैयार हैं। तुम खुद देख लोगे हमारे कारनामे।"—चोरों ने कहा।

"अच्छा तो आज राजा के ख़ज़ाने में चोरी की जाय।"—राजा ने सलाह दी।

चारों राजमहल की ओर चले। पहरेदारों की आँख बचा अन्दर घुस गये। दूसरे चोर ने ज़मीन पर हाथ रखकर कहा—

"ख़ज़ाना इस तरफ़ है। सम्भलकर चलो।" चारों उस तरफ़ बढ़े। ख़ज़ाने पर

बड़ा ताला लगा हुआ था। परन्तु उसको पहिले चोर ने एक क्षण में तोड़ दिया। चोर अन्दर घुसे।

उसी समय राजा उनकी नज़र बचाकर चला गया और जाकर उसने अपने सैनिक भेज दिये। तीनों चोर रंगे हाथ पकड़े गये।

अगले दिन दरबार में उनकी सुनवाई हुई। सिंहासन पर राजा को बैठा देखकर तीसरे चोर ने कहा—"यह वही नया आदमी है, जो हमारे साथ चोरी करने के लिये आया था।"

जब सुनवाई खतम हुयी, तो राजा ने अपनी छोटी अंगुली नीचे की। चोरों को फाँसी की सजा हो गई।

अगले दिन उनको फाँसी के तख्त पर ले गये। एक राज्य कर्मचारी ने आकर चोरों से पूछा—"तुम्हारी क्या आखिरी इच्छा है।"

"राजा से एक प्रश्न पूछना चाहते हैं, यही हमारी आखिरी इच्छा है।"—चोरों ने कहा। राजा वहाँ गया।

"तुम मुझसे क्या प्रश्न पूछना चाहते हो?"—राजा ने पूछा।

"महाप्रभु! हमने तो अपना हुनर आपको दिखा दिया है। आपने अपनी शक्ति के बारे में दो बातें बताई थीं। उसमें से आपने एक ही दिखाई है। दूसरी बात भी देखकर हम खुश होना चाहते हैं।"—तीसरे चोर ने कहा।

राजा ने मुस्कराकर अपनी दूसरी अंगुली ऊपर की। तुरंत सैनिक आये, और आकर उन्होंने चोरों के बन्धन खोल दिये। वे फाँसी के तख्त पर से हटा दिये गये।

बाद में उन चोरों ने चोरी करना छोड़ दिया। वे राजा की सेवा करते उसी के आश्रय में रहने लगे।

दो हजार वर्ष पहिले चीन में सो पो ताऊ नाम का एक वृद्ध रहा करता था। वह प्रसिद्ध पंडित था। परन्तु उसके पांडित्य को पहिचानकर उसका आदर करनेवाला कोई न था।

चू राज्य का राजा भी एक बड़ा पंडित था, और उसके बारे में यह बात फैली हुई थी कि वह पंडितों का सम्मान करता था। ताऊ से उसके दोस्तों ने कहा कि वह भी वहाँ जाकर आदर प्राप्त करे। ताऊ मित्रों की सलाह टाल न सका। अपने कपड़े वगैरह और जो कुछ पैसा पास था, उसने लिया, और चू राज्य की ओर पैदल चल दिया।

सैकड़ों मील जाना था। पहाड़ों में से रास्ता था। रास्ते में सर्दी भी आ गई। आराम के लिये वह एक गाँव में, यान्ग-चियाऊ-आयी नाम के व्यक्ति के घर गया।

आयी ने ताऊ का आतिथ्य-सत्कार किया। यह जानकर कि ताऊ पंडित है, आयी को और भी प्रसन्नता हुई। पर आयी भी कोई मामूली मनुष्य न था। उसके पास पुराने ग्रन्थों का अच्छा संग्रह देख ताऊ जान गया कि आयी भी बड़ा पंडित है।

"सुना है, चू देश का राजा पंडितों का बहुत सम्मान करता है। मैं उन्हें देखने जा रहा हूँ। तुम भी मेरे साथ क्यों नहीं चल पड़ते?"—ताऊ ने पूछा। आयी मान गया और उसके साथ चल पड़ा।

दोनों कुछ दूर साथ गये, फिर एक बड़ा भयंकर तूफ़ान आया। ल्यिान्ग पर्वत श्रेणी में वे एक बर्फ़ीले तूफ़ान में फँस गये।

श्री बादल कुमार बनर्जी

चू देश तक पहुँचने के लिये अभी चार दिन का और रास्ता था। परन्तु उस तूफान में वे एक पैर उठाकर दूसरा रख नहीं पाते थे। आखिर ठंड के मारे मरने की नौबत आ गई। खासकर बूढ़े ताऊ की तो बुरी हालत हो गई। उसने आयी से यों कहा—

"बेटा! मेरा काम तो खतम हो गया है। कुछ भी हो, मैं चू देश पहुँच नहीं पाऊँगा। अगर तुमने मेरे गरम कपड़े पहिन लिये तो तुम आगे जा सकोगे, और राजा को देख सकोगे। मैं अपने गरम कपड़े देता हूँ। ले लो।"

परन्तु आयी ने न माना। "जाना है तो दोनों साथ चलें। नहीं तो ठंड से दोनों ही मरें। आपके गरम कपड़े लेकर आपकी मौत का मैं हरगिज़ कारण नहीं बनना चाहता।"—आयी ने कहा।

"बेटा! तुम नौजवान हो। मेरा तो एक पैर कब्र में है ही। चू राजा अगर मेरा सम्मान करता है, तब क्या, अगर नहीं करता है, तब क्या! अलावा इसके, तुम मुझसे बड़े पंडित हो।"—ताऊ ने समझाया। पर आयी ने एक न सुनी।

बर्फ़ से बचने के लिये वे दोनों एक गुफ़ा में घुसे।

"अगर कहीं दो-चार लकड़ी मिल गईं तो आग जलाकर हाथ सेंके जा सकते हैं।"—ताऊ ने कहा। आयी लकड़ियों की खोज में बाहर गया।

आयी के वापिस आते-आते, ताऊ ने अपने गरम कपड़े उतारकर गुफ़ा में रखे, और बाहर बर्फ़ के गढ़े में वह कूद पड़ा।

आयी जब वापिस आया, तो गुफ़ा में सिर्फ़ गरम कपड़े ही दिखाई दिये। बाहर आकर देखा, तो बर्फ़ के गढ़े में ताऊ की लाश दिखाई दी।

उसके लिये प्राण न्योछावर करनेवाले ताऊ की बात सोच-सोचकर आयी बहुत दुःखी हुआ। उसने ताऊ के शव को गुफ़ा में सुरक्षित रख दिया। उसके गरम कपड़े पहिन वह सही-सलामत चू देश पहुँचा।

चू देश के राजा ने आयी के पाण्डित्य की प्रशंसा की और उसको राज-कवि के ओहदे पर नियुक्त कर दिया।

जब आयी का यों सम्मान हो रहा था, तो राजा ने उसकी आँखों में तरी पा, उसका कारण पूछा।

"महाराज! आप मेरे पांडित्य का इतना आदर कर रहे हैं। ताऊ की उदारता के सामने मेरा पांडित्य किस काम का!"—आयी ने कहा।

ताऊ के बलिदान की बात सुन राजा को बहुत आश्चर्य हुआ। वह आयी के साथ उस गुफ़ा के पास गया, जहाँ ताऊ का शव सुरक्षित रखा हुआ था। उसका अन्त्येष्टि-संस्कार किया, और वहाँ पर उसकी एक समाधि भी बनवा दी।

बाद में ताऊ की समाधि चीन के पंडितों के लिये एक तीर्थ-स्थल बन गई।

गर्वभंग

पहिले कभी बनारस में एक स्त्री रहा करती थी। उसे यह अभिमान था कि वह बहुत पतिव्रता थी। पति के भोजन करने से पहिले वह स्वयं कभी भोजन न करती थी। जब कभी पति शहर से बाहर जाता तो वह इस फ़िक्र में पड़ जाती कि पति ने खाना खाया है कि नहीं। खाया है तो ठीक वक्त पर खाया है कि नहीं। इसी चिन्ता में वह खुद पानी पीकर उपवास करती।

उसको देखकर आस-पड़ोस की औरतें हँसा करतीं। परन्तु वह दूसरी स्त्रियों की निन्दा करती।

"तुम पातिव्रत धर्म के बारे में कुछ नहीं जानती हो। जब यह मालूम हो जाता है कि पति खाने के लिये नहीं आ रहे हैं तो खुद खा लेती हो। अगर एक दिन बिना खाये रह गयी, तो क्या होता है? पति शहर में हो, या न हो, स्वयं तीन बार नियम पूर्वक खाना खाती हो। दूसरे शहर में जाकर आदमी ने कुछ खाया है कि नहीं, इसकी फ़िक्र भला तुम्हें क्या होगी। मैं कभी वैसा नहीं कर सकती"—इस तरह से वह व्याख्यान झाड़ा करती।

लोगों को गुस्सा आया। "वह अपना ढोंग हम पर भी क्यों लादना चाहती है!"—उन्होंने आपस में कानाफूसी कर अपने पतियों से भी इस बारे में कहा।

उसका पति यह सब सुन न सका। पत्नी को उसने सबक सिखाने की ठानी। वह रोज़ भोजन के लिये देरी से आने लगा। कई बार तो खाने के लिये जाता ही नहीं।

एक बार, यकायक, पत्नी को बिना बताये वह किसी दूसरे शहर में चला गया, और दो-चार दिन तक घर वापिस न आया।

श्री सुशीला गुरवी

इस वजह से उसकी पत्नी को काफ़ी दिक्कत हुई। वह अपने धर्म को रो-पीटकर निभाती जाती थी। उसने पति से वक्त पर भोजन के लिये आने को कहा।

एक दिन सवेरे भोजन के समय पति ने पत्नी से कहा—"आज अच्छी खीर बनाओ। खीर खाये बहुत दिन हो गये हैं।"

पत्नी बड़ी सन्तुष्ट हुई। उसको भी अच्छा खाये-पिये बहुत दिन हो गये थे। "भोजन के लिये देरी करना नहीं, ठीक वक्त पर आना।"—पत्नी ने पति से कहा। रसोई में जाकर उसने अपने मन-पसन्द पकवान, शाक, सब्ज़ी, खीर वगैरह बनाई और पति की प्रतीक्षा करने लगी।

बहुत देर इन्तज़ार की, पर पति न आया। आखिर दोपहर के बाद वह आया।

"खाना तो कभी का तैयार हो चुका। आइये, भोजन के लिये आइये।"—पत्नी ने कहा।

"ज़रा ठहरो, अभी तालाब में नहाकर आता हूँ।"—कहता कहता पति बाहर चला गया। पर वह जल्दी वापिस न आया। पत्नी की भूख के मारे बुरी हालत हो रही थी। फिर पकवानों को सामने देखकर
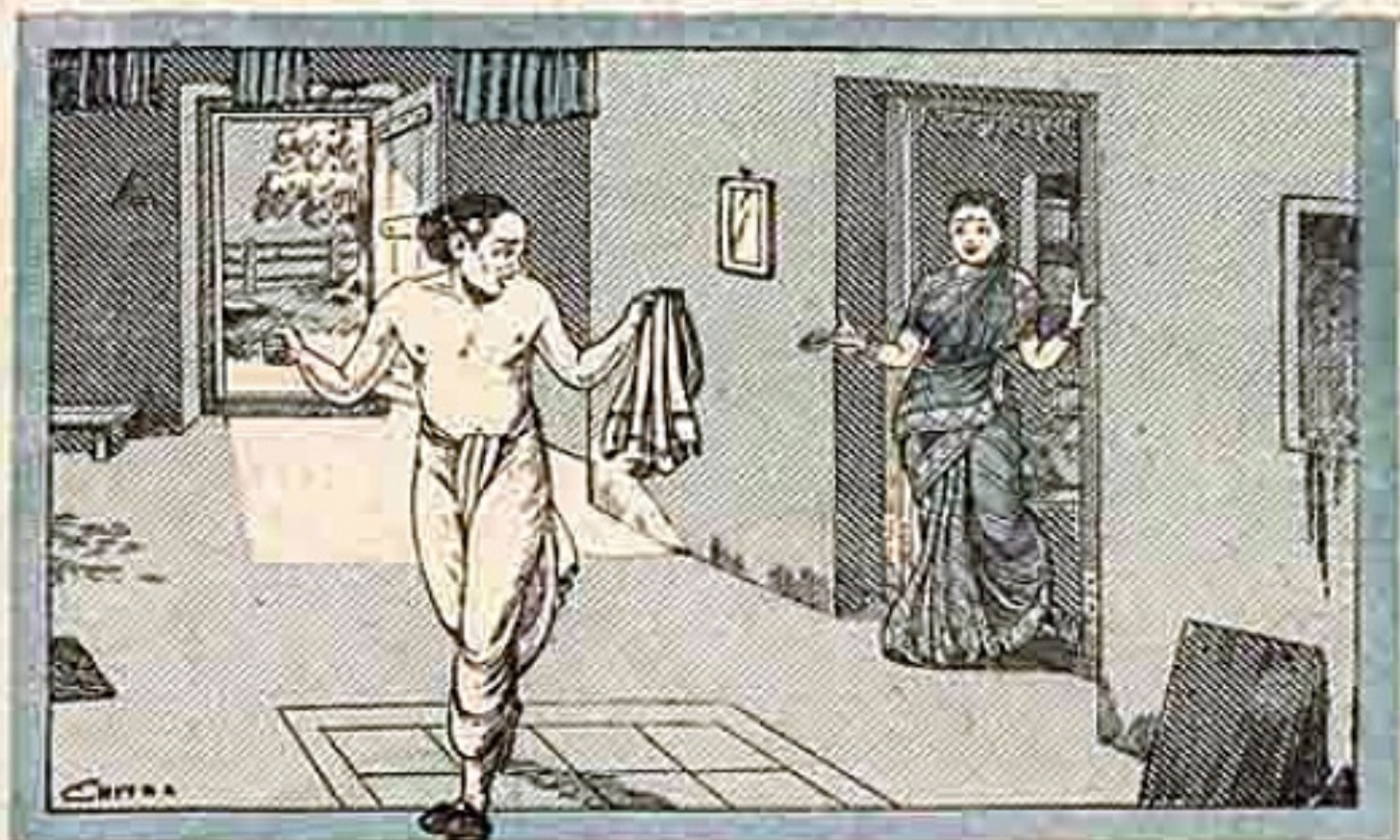
उसकी अवस्था और भी दयनीय हो गई थी।

ठीक दो घंटे बाद पति वापिस आया। पत्नी खुश हुई। परन्तु अन्दर आते ही, उसकी आँखें मिच-सी गई, और वह कमरे में गिर गया। जब पत्नी ने पास जाकर देखा, तो पति का शरीर ठंडा लगा।

पत्नी ने सोचा कि पति मर गया है। अगर उसने रोना-धोना शुरू किया तो आस-पड़ोस के लोग आयेंगे, और देख-दाखकर वह बतायेंगे कि वे मरे हैं कि नहीं। अगर सचमुच उनके प्राण चले गये तो इन पकवानों को सूँघना तक नहीं मिलेगा। अगर खाना है, तो पहिले ही खाया जाय।

पत्नी चुपके चुपके रसोई में गई, और अपने मन-पसन्द पकवानों को पेट भर खा आई। जब वह हाथ धोकर आई, तो कमरे में उसका पति उसी हालत में पड़ा था।

तब वह धर्मपत्नी—"अरे भगवान" कह छाती पीट पीटकर रोने-धोने लगी। पाँच-दस आदमी इकठ्ठे हो गये। उन्होंने पूछा—"क्या बात है!"

"बनाये हुये पकवान खाये बगैर ही ले गया उन्हें भगवान"—वह चिल्ला रही थी।

"अगर मैंने नहीं खाये, तो कल से कल तूने तो खा ही लिये हैं!"—पति ने उठकर पूछा।

सब को जो कुछ गुज़रा था, भलीभांति मालूम हो गया। पति के किये हुये धोखे के कारण पत्नी बड़ी शर्मिन्दा हुई।

"और तुम तो हमें पातिव्रत धर्म पर व्याख्यान झाड़ा करती थी!"—आस-पड़ोस की औरतें उसको चिढ़ाने लगीं।

तब से उस स्त्री ने न पातिव्रत्य धर्म पर व्याख्यान ही दिये, न दूसरी स्त्रियों की निन्दा ही की।

[१५]

[शिवदत्त को खोजता खोजता जब समरसेन चला आ रहा था, तो उसने सौभाग्य से अपने सैनिकों को मगर के मुँह से बचा लिया था न? उनसे उसने यह मालूम कर लिया था कि व्याघ्रदत्त किस तरफ़ जा रहा था। शिवदत्त ने जो चिट्ठी ढहनों पर लटका दी थी, वह भी उसने पढ़ी। परंतु उसी समय व्याघ्रदत्त उसके सामने आ गया था। अब आगे पढ़िये...]

यह जानने के लिये समरसेन को बहुत समय न लगा कि उन पर कौन बाण-वर्षा कर रहे थे। उन्हें गुहा-कन्दराओं में प्रतिध्वनित होता जय-जयकार—"व्याघ्रदत्त की जय! व्याघ्र प्रान्त की जय!!"—निरन्तर सुनाई पड़ रहा था।

"ये व्याघ्रदत्त के सैनिक हैं। उनको हमारे छुपने की जगह मालूम हो गई है। वे हम पर अचानक हमला कर हमें मार देना चाहते हैं।"—समरसेन ने अपने सैनिकों से कहा।

व्याघ्रदत्त के सैनिक चट्टानों की आड़ में से समरसेन और उसके सैनिकों पर बाणों की बौछार कर रहे थे। उस हालत में अगर जीते जी बाहर निकलना था, तो उनके सामने सिर्फ़ एक ही रास्ता था—वह था, चट्टानों के पीछे पीछे छुपे छुपे उस प्रान्त से भाग निकलना।

समरसेन के साथ उसके सैनिक भी, चट्टानों के पीछे से सामनेवाली सुरंग की ओर धीमे धीमे रेंगने लगे। वह सुरंग

कहाँ जायेगी? उसकी परली तरफ़ क्या है? ये प्रश्न उनको अभी सताते नहीं लगते थे। पहिले उन्होंने व्याघ्रदत्त के फंदे से बाहर निकलने में ही अपना श्रेय समझा।

आखिर सब मिलकर सही सलामत एक गुफ़ा में पहुँचे। व्याघ्रदत्त के सैनिकों का शोर-शराबा धीमे धीमे कम हो गया। समरसेन ने अनुमान किया कि वे उन्हें खोजते खोजते किसी और रास्ते पर चले गये थे।

तब तक दोपहर हो चुकी थी। परन्तु समरसेन इधर उधर ढूँढ़ता-ढाँढ़ता, लड़खड़ाता, उस काली गुफ़ा में, आगे बढ़ने लगा। उसे गुफ़ा की परली तरफ़ सूर्य की पतली रश्मि दिखाई दी। फिर थोड़ी दूर और चलकर वह गुफ़ा के पार निकल गया।

समरसेन को अपनी ही आँखों पर विश्वास न हुआ। उसे लगा कि यह स्वप्न है या सत्य। ठीक सामने उसको शिवदत्त के बताये हुये खंडहर दिखाई दिये। ऐसा लगता था, मानों कोई महानगर भूकम्प के कारण नष्ट हो गया हो। बड़े मकान टूटी फूटी अवस्था में—किसी की छत गिरी हुयी थी, तो किसी की दीवार, दिखाई दिये।

इसमें सन्देह न था कि ये खंडहर वे ही थे, जिनको शिवदत्त ने तस्वीर में दिखाया था। शिवदत्त यहीं कहीं छुपा हुआ होगा। समरसेन ने सोचा कि हिम्मत बाँधकर आगे चलना ही अच्छा होगा। उसके सैनिक भी आश्चर्य से उन खंडहरों की तरफ़ देख रहे थे।

अब क्या किया जाय? वह अभी यह सोच ही रहा था कि उस सारे इलाके में शंखनाद और शोर सुनाई दिया। दूसरे क्षण, उसको व्याघ्रदत्त पचास-साठ सैनिकों

के साथ खंडहरों में से आता हुआ नज़र आया।

सनरसेन ने अपने सैनिकों को सावधान किया, और स्वयं यह देखने लगा कि व्याघ्रदत्त किस तरफ़ जाता है। और व्याघ्रदत्त के हाव-भाव देखने से लगता था कि वह उनकी बात ही भूल गया हो।

वह ऐसे चल रहा था, मानो जिस काम को वह करने निकला था, वह कर लिया हो। उसकी चाल में घमंड था। चेहरे पर प्रसन्नता। सैनिक भी तालियाँ बजा बजाकर हँस रहे थे।

क्या व्याघ्रदत्त को यह मालूम हो गया है कि शिवदत्त कहाँ छुपा हुआ है? क्या उसने उसे पकड़ लिया है? सनरसेन को यह सन्देह होने लगा। परन्तु सैनिकों के साथ कोई भी बन्दी न था। सनरसेन ने सोचा कि हो सकता है कि व्याघ्रदत्त को यह मालूम हो गया हो कि अपूर्व शक्तिवाला शाक्तेय का त्रिशूल कहाँ रखा हुआ है।

व्याघ्रदत्त टूटे-फूटे मकानों की बगल में अपने सैनिकों को लिये हुये चला जा रहा था। उसको देखने से लगता था, जैसे उसको मालूम हो कि वह कहाँ जाना
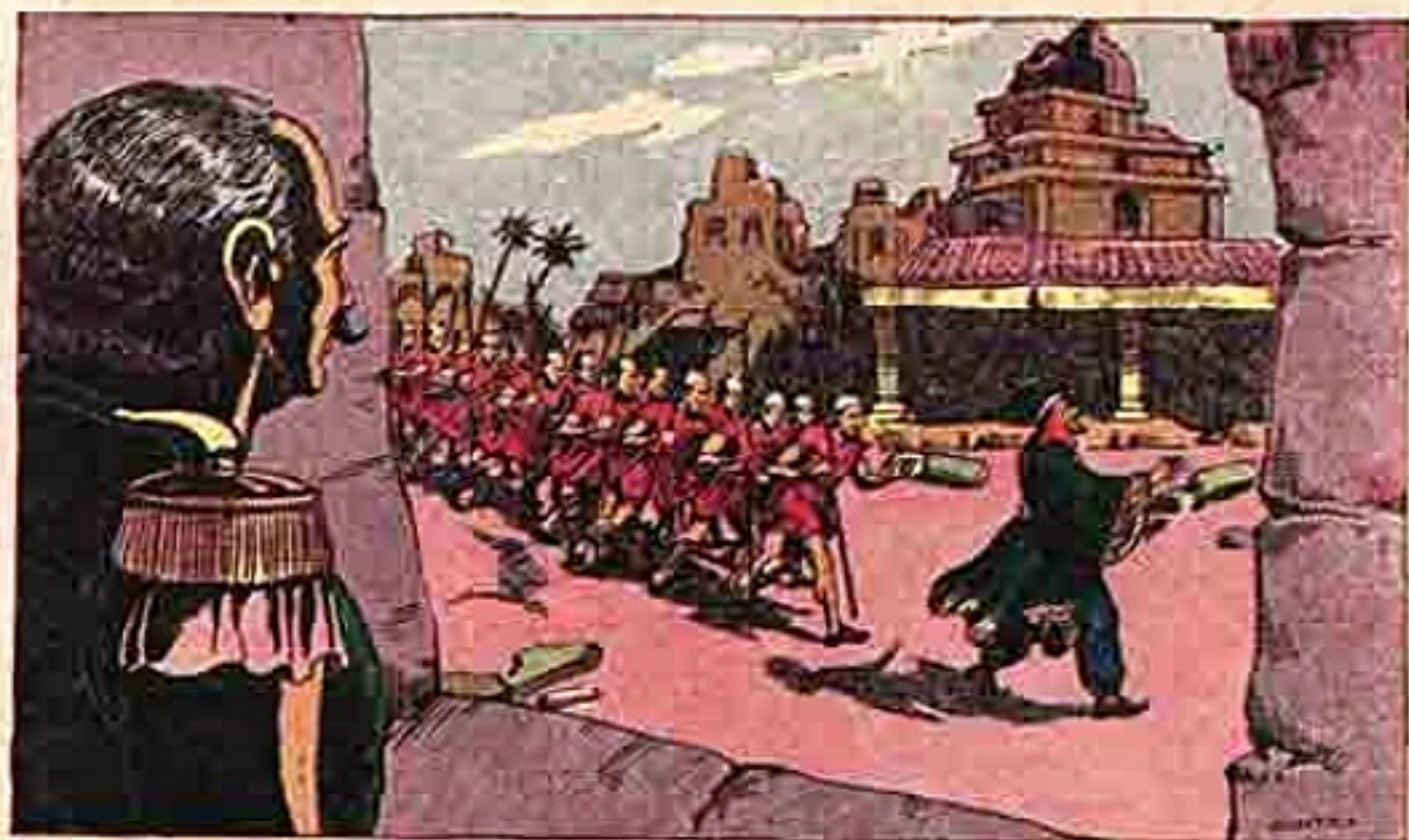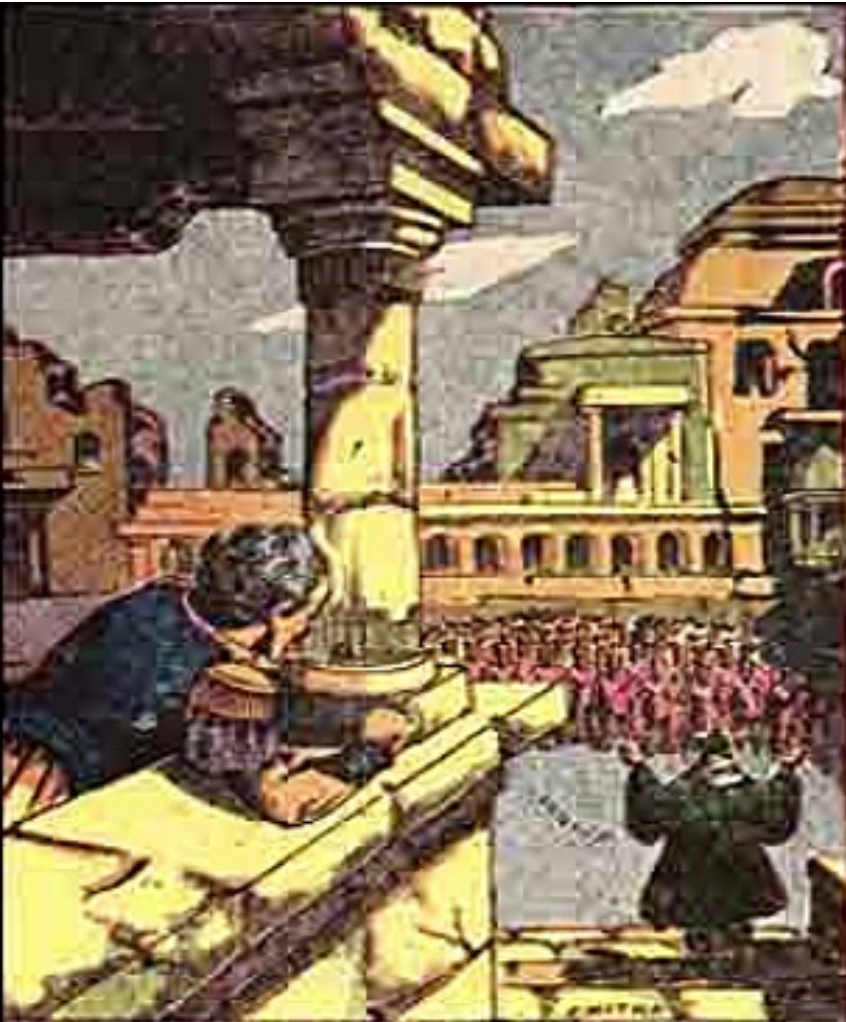
चाहता है। वह सैनिकों को रास्ता दिखा रहा था।

समरसेन चट्टानों के पीछे पीछे, अपने सैनिकों को लेकर, एक बड़े मकान के खंडहर के अहाते में पहुँचा। वहाँ आधे गिरे हुये खम्भों के पीछे से वह व्याघ्रदत्त और उसके सैनिकों को देखने लगा।

व्याघ्रदत्त, जो सैनिकों को आगे चलने का आदेश दे रहा था, एक जगह यकायक रुका और गम्भीर ध्वनि में अपने सैनिकों से कहने लगा—"व्याघ्रयोद्धाओ! आज वह समय आ गया है, जब हमारी मेहनत सफल होने जा रही है। मैंने आप सब को वचन दिया था न कि आप में से एक एक को एक एक देश का राजा बनाऊँगा! मैं अपना वह वचन पूरा करूँगा। परन्तु अब आपको हिम्मत से एक काम करना होगा।"

"हम खतरनाक से खतरनाक काम करने के लिये तैयार हैं। बताइये, वह क्या काम है?"—सैनिकों ने जोर से पूछा।

व्याघ्रदत्त ने मुस्कुराते हुये कहा—"इन खंडहरों में हमारी इच्छा पूरी होने जा रही है। वह देखो, आपको वह मकान दिखाई दे रहा है न! उसकी ड्योढ़ी गिर चुकी है और पत्थरों से रास्ता रुका पड़ा है। तुम वहाँ पड़े हुये पत्थरों को और खम्भों को हटाओ, और रास्ता ठीक करो। हम जिस अमूल्य चीज़ की खोज कर रहे हैं, वह इसी मकान में है, और उस मकान के लिये रास्ता इस ड्योढ़ी में से है।"

व्याघ्रदत्त का यह कहना था कि सैनिकों में, न जाने कहाँ से उत्साह भर आया; वे हँसते, कूदते-फाँदते, शोर करते, उस खंडहर के पास गये। कई फावड़ों को

लेकर रास्ते में पड़े पत्थरों को खोद-खाद कर एक तरफ़ करने लगे।

सैनिक इतने जोश से काम कर रहे थे कि उनको आनेवाले खतरे का भान भी न था। उस खंडहर के टूटे हुये खम्भे, पत्थर, एक तरफ़ को झुककर गिरनेवाले थे।

समरसेन दूर से यह सब देख रहा था। यह साफ़ था कि व्याघ्रदत्त की आज्ञा पालन करनेवाले किसी गिरते खम्भे के नीचे पड़ चकनाचूर हो जायेंगे।
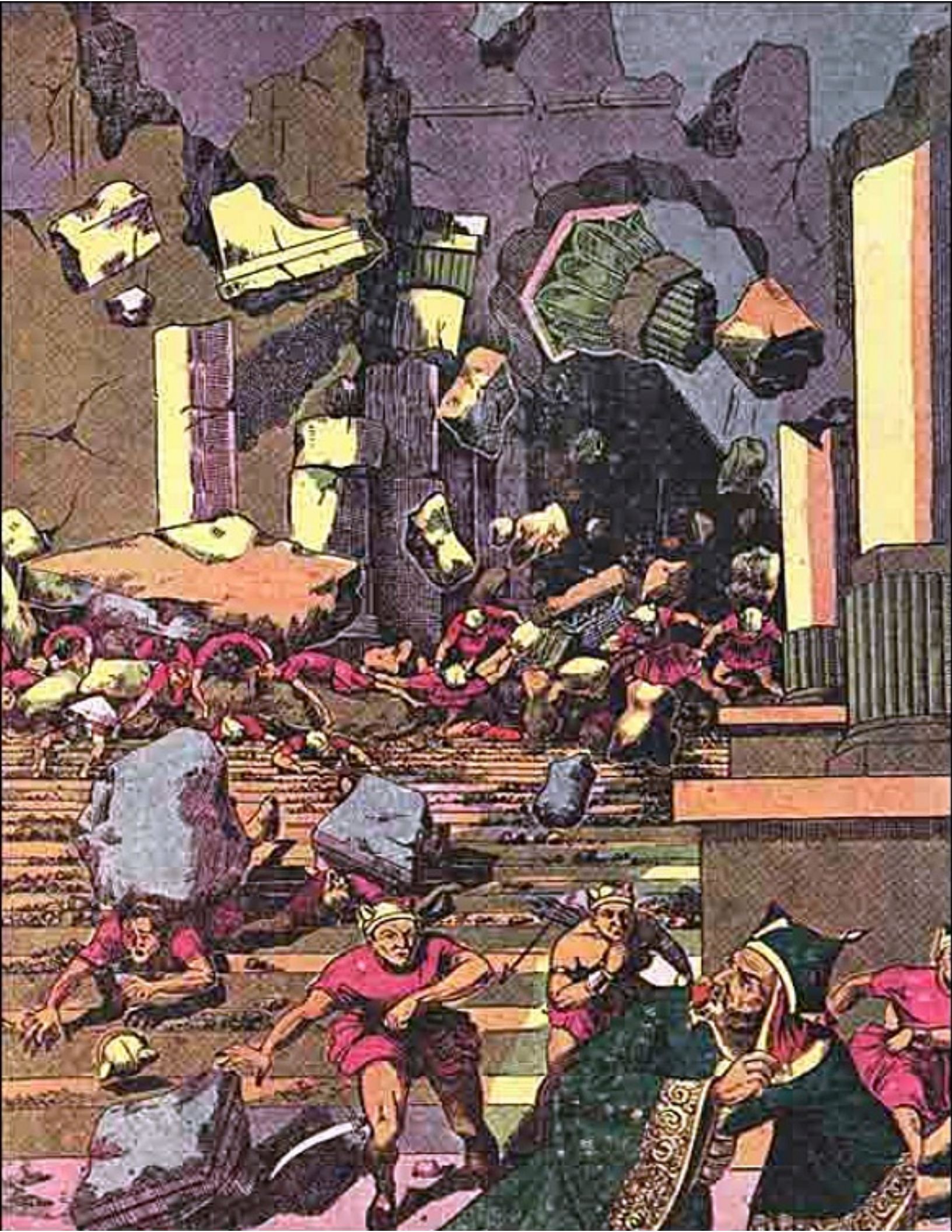
व्याघ्रदत्त, कुछ दूर, एक तरफ़ खड़ा हो, पत्थरों को हटाते हुये सैनिकों को जोश दिला रहा था। उसके इधर उधर देखने से समरसेन को लगा कि उसको भी आनेवाले खतरे के बारे में मालूम था।

व्याघ्रदत्त जान-बूझ कर अपने सैनिकों को आफ़त में डाल रहा था। समरसेन ने अभी यह अनुमान किया ही था कि यकायक खंडहर नीचे धड़ाम से ढह गया। गिरते हुये खम्भों के नीचे, चीखते-चिल्लाते व्याघ्रदत्त के कई सैनिक, देखते देखते मर गये। और जो बच-बचाकर बाहर निकल आये थे, घावों के कारण उनकी हालत बुरी हो रही थी।

इस घटना के घटने में उतनी देर भी न लगी, जितनी कि आँख मींचने में होती है। अपनी जान बचाकर, कुछ सैनिकों को ले भागकर व्याघ्रदत्त थोड़ी दूर जा खड़ा हुआ। यह देखकर उसके कान पर जूँ तक न रेंगी।

"व्याघ्रेश्वरी की पूजा में शायद कोई त्रुटि रह गई है। इसी कारण इस ड्योढ़ी के सामने इतने सारे सैनिक बलि हो गये हैं। अब हमें कोई डर नहीं है, हिम्मत बनाये रखो।" — कहकर व्याघ्रदत्त अपने बचे हुये सैनिकों को ढाढ़स बँधाने लगा।

सैनिक डर के मारे कांप रहे थे। परन्तु उन्होंने अपने सरदार का आश्वासन सुन अनुमति में अपने सिर हिला दिये। तब व्याघ्रदत्त ने अपने हाथ में लिये हुये चित्र को दिखाते हुये कहा—

"अपूर्व शक्तिवाले शाक्तेय के त्रिशूल के बारे में आपसे कहने का मैंने निश्चय किया है। उसके प्रभाव से हम लोग जो बच गये हैं, राजा महाराजा हो सकते हैं। जहाँ वह त्रिशूल रखा हुआ है, वह इस चित्र में साफ़ साफ़ दिखाया गया है। हाथियों के जङ्गल में, विष वृक्ष से सौ गज़ दूर, मृत वीरों की समाधि के नीचे, गुरुद्रोही के अस्थि-पंजर में शाक्तेय का त्रिशूल रखा हुआ है।"

यह बात सुनते ही छुपे हुये समरसेन के शरीर में, आश्चर्य और भय से कँपकँपी आ गई। जिस अपूर्व शक्तिवाले त्रिशूल के लिये, इस मान्त्रिकों के द्वीप में, इतनी हत्यायें, व युद्ध चल रहे हैं, क्या वह आखिर इस दुष्ट व्याघ्रदत्त को मिल जायेगा?

तब हमारा कर्तव्य क्या है? यह प्रश्न समरसेन के सामने रह रहकर आने लगा। शिवदत्त का क्या हुआ? क्या वह जानता

है कि त्रिशूल कहाँ है? क्या अपने साथ के सैनिकों से व्याघ्रदत्त का मुक़ाबला करना अच्छा होगा या न होगा?

समरसेन कुछ भी निश्चय न कर पाया। अगर एक बार व्याघ्रदत्त के हाथ में वह त्रिशूल आ जाता है, तो उसका मुक़ाबला करना किसी के बस में न होगा। एकाक्षी और चतुर्नेत्र, जो अपने को मन्त्र-विद्या में चतुर समझते हैं, इसके सामने उनको सिर झुकाना होगा। धन-सम्पदा से भरी हुई नाव, और उसकी रखवाली करनेवाली नाग-कन्या, इसके हाथ में आ जायेंगी।

इस आपत्ति में सिवाय चतुर्नेत्र के, उसकी सहायता करनेवाला कोई न था। पर चतुर्नेत्र को उसकी इस विपत्ति के बारे में मालूम कैसे हो? नाग-कन्या को पाने के लिये वह ज़मीन-आसमान एक कर रहा है। पर वह शाक्तेय के अपूर्व त्रिशूल के बारे में जानता है कि नहीं? अगर यह त्रिशूल मिल जाय, तो क्या उसकी सहायता से, यह द्वीप तो क्या, क्या सारा संसार जीता जा सकता है?

समरसेन इसी उधेड़बुन में था कि उसे व्याघ्रदत्त की कर्कश ध्वनि फिर सुनाई दी।

"कल शुभ दिन है। रविवार है, अमावस्या है। इसलिये आज की रात हम यहीं विश्राम करेंगे। कल रात को, ठीक एक बजे हमें हाथियों के जङ्गल में प्रवेश करना होगा।"

व्याघ्रदत्त सैनिकों से यह कहकर, पास वाले एक चट्टान पर बैठ गया। सैनिक भी अपने अपने हथियार नीचे रख, उसकी चारों तरफ़ घेरा डालकर बैठ गये।

व्याघ्रदत्त की बातों ने समरसेन में आशा की चिनगारी लगाई। उसके सामने अभी चौबीस घंटे का समय था। इतने समय में, चाहे जैसे भी हो, व्याघ्रदत्त को मारना होगा। मगर फ़िलहाल उसको, और उसके सैनिकों को आराम लेना ही अच्छा था।

यह सोचकर, समरसेन झट पीछे की ओर मुड़ा। उसके मुड़ते ही वह जिस खम्भे के सहारे खड़ा हुआ था, वह यकायक धड़ाम से नीचे गिर गया। बड़ी आवाज़ हुई।

आवाज़ सुनते ही वह घायल शेर की तरह उठ खड़ा हुआ। सैनिक भी अपने अपने हथियार लेकर खड़े हो गये। व्याघ्रदत्त की दृष्टि ठीक सीधे उसी खण्डहर की ओर गई, जहाँ समरसेन छुपा हुआ था।

(अभी और है)

मस्त मौला

एक था राजा। वह बहुत ऐश और आराम से रहता था। उसकी प्रजा भी सुखी थी, पर राजा अक्सर यह सोचा करता कि वह उतना सुखी नहीं है, जितना कि वह हो सकता था।

"मुझ से अधिक क्या कोई सुखी है इस राज्य में?"—यह प्रश्न राजा कभी कभी अपने कर्मचारियों से पूछता।

"महाराज! यह असम्भव है। इस राज्य में तो अलग, इस संसार में कोई ऐसा नहीं, जो आपसे अधिक सुखी हो।"—वे जवाब दिया करते।

राजा को यह जवाब सुनकर तसली नहीं होती। जब वह वेश बदलकर, पासवाले गाँव में घूम-फिर रहा था, तो एक झोंपड़ी में से बेले और गाने की झीनी झीनी आवाज़ आ रही थी।

"हो सकता है कि वह गानेवाला आदमी गरीब ही हो। परन्तु वह मुझ से अधिक बेफ़िक्र नज़र आता है। मैं उसकी तरह मस्त हो क्यों नहीं गा पाता हूँ?"—यह सोच राजा ने झुककर उस झोंपड़ी में झाँका।

झोंपड़ी में एक टूटा-फूटा दिया जल रहा था। राजा की उम्रवाला कोई व्यक्ति चटाई पर बैठ, बेले की तार टनका टनकाकर बड़े मज़े में, गला फाड़ फाड़कर गा रहा था। राजा को देखते ही उसने कहा—"आओ भाई, अन्दर आकर बैठो!"

राजा अन्दर जाकर बैठ गया। "लगता है, बड़े मज़े में हो। क्या तुम्हें कोई फ़िक्र नहीं है? जिन्दगी कैसे चल रही है?"—राजा ने पूछा।

"मुझे तो कोई फ़िक्र नहीं है। रोज़ सवेरे शहर चला जाता हूँ। गली गली

श्री वल्लभदास परमार

फिरता हूँ। बर्तनों की मरम्मत करता हूँ। कलाई करता हूँ। दो-चार पैसे कमा लेता हूँ। जो शाक-सब्जी चाहिये, खरीद लेता हूँ। घर आकर खाना बनाता हूँ। खा-पीकर, जब तक नींद न आये, तब तक मज़े में गाता हूँ। न मैं किसी का पालन-पोषण करता हूँ, न कोई मेरा पालन-पोषण करता है। पैसा जमा करने की भी धुन मुझ में नहीं है।"

अगले दिन राजा ने आज्ञा निकलवाई कि गली में घूमने-फिरनेवालों से बर्तन पर कलाई लगवाना मना है। जो कोई अपने बर्तनों की मरम्मत या उन पर कलाई करवाना चाहे, वे राज-महल में करवा सकते हैं।

उस दिन गानेवाले को शहर में एक दमड़ी भी न मिली। जब वह गली में घूम रहा था तो एक घर के सामने, कोई बड़ा आदमी लकड़ियाँ चीर रहा था। गानेवाले ने उससे जाकर कहा—"महाराज! आप क्यों तकलीफ़ करते हैं? मैं लकड़ियाँ चीर देता हूँ। आप मेरी मेहनत के लिये मज़दूरी दिलवा दीजिये।"

"मज़दूर नहीं मिले। इसलिये खुद ही यह काम करना पड़ा।"—कहते-कहते उस आदमी ने गानेवाले के हाथ में कुल्हाड़ी थमा दी। तब से वह गानेवाला रोज़ शहर आता और जिनको लकड़ियाँ चिरवानी होती, उनकी लकड़ियाँ चीर देता, और जब उसके काफ़ी पैसे बन जाते, तो घर चला जाता।

उसकी हालत अब कैसी थी?—यह जानने के लिये वेष बदलकर, राजा एक दिन शाम को उसकी झोंपड़ी की ओर गया। फिर वही मस्त गाना सुनाई दिया। राजा को बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने झोंपड़ी

में घुसकर जो कुछ गुज़रा था, सो मालूम कर लिया।

गानेवाले की मस्ती का कारण शारीरिक परिश्रम है या कुछ और, यह जानने के लिये राजा को एक उपाय सूझा।

अगले दिन सबेरे राज-सैनिकों ने गानेवाले की झोंपड़ी में जाकर कहा कि उसे जल्लाद बुला रहा है। बिना कुछ कहे-सुने, गानेवाला उनके पीछे-पीछे जल्लाद के पास गया।

"हमें हुक्म मिला है कि तुम्हें राज-सैनिक के रूप में नियुक्त करें। तुम झट जाकर दरबार में अपना काम करना शुरू कर दो।"—जल्लाद ने कहा।

दरबार में जाकर गानेवाले ने फ़रियाद की कि उसको नौकरी की ज़रूरत नहीं है। मगर किसी ने उसकी न सुनी। उसके बहुत रोने-पीटने पर भी उसको राज-सैनिक की वर्दी, पगड़ी, तल्वार, वगैरह दे दी गई।

गानेवाले को माहवारी वेतन मिल्ता था। रोज़ मज़दूरी न दी जाती थी। उसे कुछ न सूझता कि क्या करे। एक दिन उसने एक व्यापारी के पास जाकर अपनी
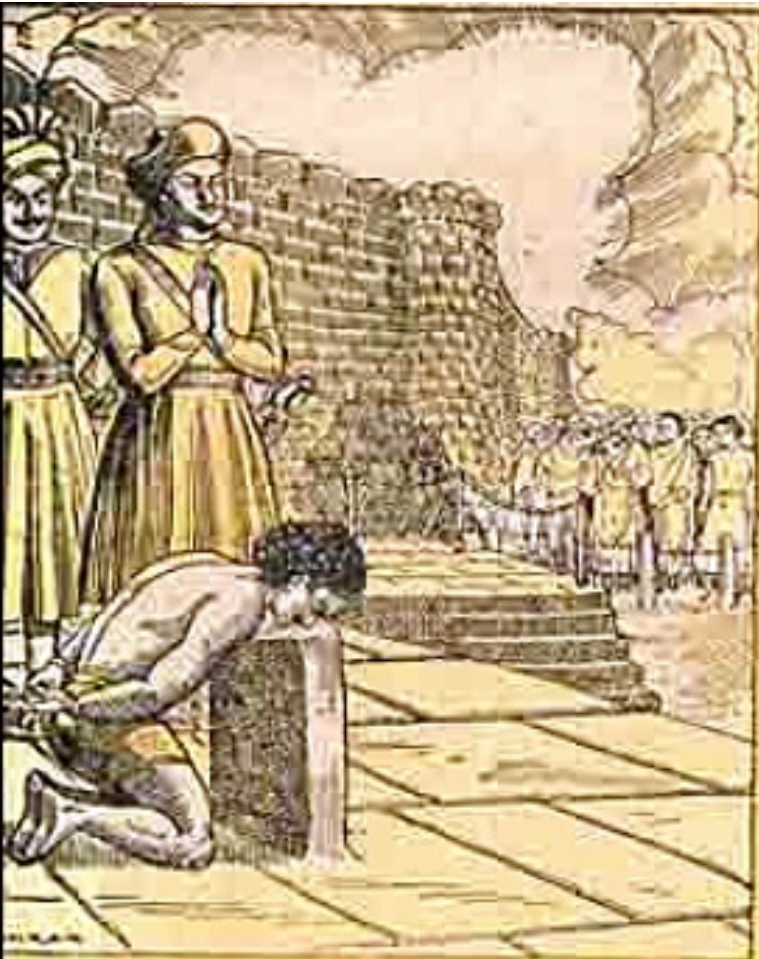
गया। झोपड़ी में से अब भी गाना सुनाई पड़ रहा था।

"यह अब भी मस्त है। मैं चूँकि प्रजा को दंड देता हूँ, शायद इसीलिये मुझे सुख नहीं है। इससे भी किसी को दंड दिलवाना चाहिये"—राजा ने सोचा।

अगले दिन उसको वध्यस्थल पर जाने की आज्ञा हुई। जब वह पहुँचा तो वहाँ एक कैदी था। उसकी बगल में एक जल्लाद था। कैदी का शिरच्छेद देखने के लिये चारों ओर लोग बैठे हुये थे।

"उस कैदी को राजा ने मृत्यु-दण्ड दिया है। तुम अपनी तलवार से इसका सिर काटो"—जल्लाद ने गानेवाले को आज्ञा दी।

गानेवाले को कुछ न सूझा। लकड़ी की तलवार से आदमी का सिर कैसे काटा जाय?

"बाबू! मुझे नहीं मालूम, इस आदमी ने क्या अपराध किया है? क्यों आप मुझे यह काम करने के लिये कहते हैं? किसी और से कहिये।"—वह जल्लाद से विनति करने लगा।

"उसके अपराध से तुम्हें क्या मतलब? राजा का हुक्म है कि तुम उसका सिर

तलवार गिरवी रखी, और उससे समझौता कर लिया कि जब कभी उसको पैसे की ज़रूरत हो, वह दे दिया करे, और वह महीने के अन्त में तनख्वाह मिलने पर सब चुका दिया करेगा।

परन्तु बिना तलवार के खाली म्यान का पता लग सकता था। इसलिये उसने एक तरीका सोचा। बढ़ई के पास जाकर उसने एक लकड़ी की तलवार बनवाई और उसे म्यान में रख इधर-उधर घूमने लगा। कुछ दिन बाद राजा वेष बदलकर फिर उसकी झोंपड़ी की तरफ़

काटो।" जल्लाद ने ज़रा गुस्सा होते हुये कहा।

अब कोई रास्ता न था। गानेवाले ने आँखे मींचा और हाथ जोड़कर ज़ोर ज़ोर से प्रार्थना करने लगा—"भगवान! मैं एक भयंकर काम करने जा रहा हूँ। यदि यह कैदी निर्दोषी हो तो मेरी तल्वार को लकड़ी का बना दे, और मुझे पाप से बचा!"—उसने झट म्यान में से तल्वार निकाली।

गानेवाले ने जो तल्वार बाहर निकाली, तो वह लकड़ी की थी; इसलिये लोग उसको देख यकायक आश्चर्य में पड़ गये। फिर लोगों में से आवाज़ आने लगी—"कैदी निर्दोषी है, कैदी निर्दोषी है, उसे छोड़ दिया जाना चाहिये।" जल्लाद भी हक्का-बक्का हो इधर-उधर देखने लगा। इस बीच में लोग आगे बढ़ आये। कई गानेवाले के पैरों पर पड़ कहने लगे—

"आप महापुरुष हैं। अवतार हैं।" कुछ लोग जाकर कैदी के बन्धन खोलने लगे।

देखते देखते यह बात सारे शहर में फैल गई कि कैदी निर्दोषी है और राज-सैनिक महात्मा है। जल्लाद लाचार हो, भागा भागा राजा के पास गया, और उसको सारा वृत्तान्त कह सुनाया। राजा को आश्चर्य हुआ और सन्देह भी। उसने गानेवाले को अपने पास बुलाया और सच बात पूछी। गानेवाले ने सच सच बता दिया।

राजा ने उसे काफी धन दिया और कहा—"तुम्हें अब तंग न करेंगे। तुम जैसे जीना चाहो, जीओ। हम तुम्हारे रास्ते में नहीं आयेंगे।" उसने गानेवाले को जाने के लिये कहा। तब राजा जान गया कि जो अपने पैरों पर खड़े होकर जीना चाहता है, उसे कोई फ़िक्र नहीं होती।

किसी ज़माने में प्रयाग का राजा प्रदीप था। उसके दरबार में अनेक पण्डित रहा करते थे। उनमें से कई पीढ़ियों से दरबार में पण्डित के रूप में चले आते थे। उनमें से एक का नाम था, बद्रीप्रसाद।

बद्रीप्रसाद के पिता, पितामह, पुरखे, प्रसिद्ध पण्डित थे और प्रयाग राजा के दरबार में ही रहते आये थे। परन्तु बद्रीप्रसाद केवल पण्डित पुत्र था, यानी—मूर्ख। क्योंकि वह सालों से सुनता आ रहा था, इसलिये उसको कुछ श्लोक ज़रूर याद थे, पर उसमें दुनियावी ज्ञान कतई न था। वह परम मूर्ख था। पर राजा को यह बात न मालूम थी।

परन्तु दूसरे दरबारी पण्डितों ने बद्रीप्रसाद की हालत आसानी से जान ली थी। उनको यह अच्छा न लगता था कि उस जैसे मूर्ख को भी उनके साथ उच्च पद दिया जाय। इसलिये उन्होंने राजा से कहा—"महाप्रभु! बद्रीप्रसाद में लोक-ज्ञान बिलकुल नहीं है, वह निरा मूर्ख है। उसे दरबार में एक ओहदा देना दरबार की प्रतिष्ठा पर धब्बा है। आप स्वयं परीक्षा करके देख सकते हैं।"

राजा प्रदीप चकित हुआ, क्योंकि बद्रीप्रसाद का पिता दिग्गज पण्डित था। उसकी मृत्यु के बाद उसका स्थान बद्रीप्रसाद को मिला था। माथे पर विभूति, गले में रुद्राक्ष-माला, कन्धे पर शाल देखकर, बद्रीप्रसाद सचमुच पण्डित ही लगता था। यह देखने के लिये कि वह वास्तव में मूर्ख है कि नहीं, एक दिन राजा ने भरे दरबार में उससे यों पूछा—

"पण्डित प्रवर! कई आदमियों को मैंने कछुवे पकड़ते देखा है। वह मुझ को

श्री द्वारकानाथ आचार्य

समझ में नहीं आया कि उनको कछुओं से क्या फ़ायदा होता है।"

यह सुन बद्रीप्रसाद ने बिना किसी हिचकिचाहट के कहा—"महाराज! कछुवे का दूध बहुत ही स्वादिष्ट होता है। उसके बालों से काश्मीरी दुशाल बुने जाते हैं।"

राजा को आश्चर्य हुआ। दरबार में कुछ लोगों को हंसी आयी। यह मालूम हो गया कि बद्रीप्रसाद मूर्ख है। राजा ने फिर पूछा—

"पण्डित पुत्र! मैंने सुना है कि एक खरगोश गरजता हुआ शेर पर कूदा। क्या यह बात सच हो सकती है?"

"इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है महाराज! शेर आखिर खरगोश के लिये आहार-वस्तु ही तो है। शास्त्रों में यह भी लिखा है कि खरगोश उछलकर शेर पर चढ़ जाता है, और उसके कुम्भ पर चोट कर उसको मारकर खा लेता है!"

इस बार दरबारी और ज़ोर से हँसे। राजा को भी हंसी आ गई।

"खैर, पंडित पुत्र! मैंने एक बार जलते हुये तालाब को देखा। उस तालाब में मुझे एक मछली भी न दिखाई दी। क्या वजह हो सकती है?"—राजा ने पूछा।

"तालाब जल रहा था न! इसलिये तालाब की मछलियाँ पासवाले पेड़ों पर चढ़ गई होंगी!"

"महाराज! अब तो आप ने स्वयं देख लिया है। इस मूर्ख को तुरंत दरबार में से निकलवा दीजिये!"—पण्डितों ने कहा।

"इतनी अच्छी तरह से हँसानेवाले को दरबार से हटाना अच्छा नहीं लगता। मैं आज से बद्रीप्रसाद को विदूषक नियुक्त करता हूँ!"—राजा ने कहा।

मन्त्र का प्रभाव

जब ब्रह्मदत्त काशी का राजा था, बोधिसत्व एक गाँव में, एक अछूत के घर पैदा हुआ। उसने एक विचित्र मन्त्र सीखा और उस मन्त्र के बल पर आम पैदा किया करता।

रोज़, एक डंडी कंधे पर रख, जङ्गल में, आम के पेड़ के पास जाया करता। सात गज़ दूर खड़ा हो मन्त्र जपा करता। टहनियों पर मन्त्र-जल छिड़का करता। देखते देखते, उस पानी के पड़ते ही टहनियों पर पत्ते लग जाते। मौर आता, आम लगते, और टप टपकर नीचे गिरने लगते।

यह बात सुनन्द नाम के ब्राह्मण लड़के को मालूम हो गई। उसने सोचा, चाहे कुछ भी हो, उस अछूत के पास जाकर वह मन्त्र सीखेगा।

एक बार जब बोधिसत्व जङ्गल से आ रहा था, तो सुनन्द ने उसकी डंडी, फलों का गठ्ठर उसके हाथ से ले लिया, और उठाकर घर में रख आया। तब से वह श्रद्धा और भक्ति से बोधिसत्व के घर में सब तरह के काम करने लगा।

दिन गुज़रते गये। एक बार बोधिसत्व ने अपनी पत्नी से कहा—"यह लड़का, मालूम है, क्यों हमारे पास यों खुशामद कर रहा है? वह चाहता है कि जैसे तैसे आम बनाने का मन्त्र मुझसे सीखे। परन्तु उसका स्वभाव अच्छा नहीं है। इसलिये यदि वह मन्त्र सीख भी गया, तो भी ज्यादह दिन वह फ़ायदा न उठा सकेगा।"

सुनन्द क्योंकि घर का हर काम कर देता था, इसलिये बोधिसत्व की पत्नी का दिल पिघल गया। उसने पति से कहा—"यह लड़का घर का हर काम कर रहा है। अपने लड़के से भी बढ़कर

हमारी सेवा सुश्रूषा कर रहा है। मन्त्र उसके पास रहे या न रहे, कम से कम आप तो उसे सिखा दीजिये। बाद में उसके भाग्य में जो कुछ लिखा है, वह होगा।"—पत्नी पति से बार बार कहती। आखिर मन्त्र सिखाने के लिये बोधिसत्व मान गया।

तब बोधिसत्व ने सुनन्द को बुलाकर कहा—"यह एक बहुत ही विचित्र मन्त्र है। इसकी सहायता से तुम्हें धन मिलेगा और यश भी। परन्तु अगर कोई पूछे कि तुमने यह मन्त्र किससे सीखा? तो तुम रहस्य नहीं बताना। अगर तुमने रहस्य बता दिया, तो उसी क्षण इस मन्त्र का प्रभाव दूर हो जायेगा।" फिर उसने सुनन्द को मन्त्र सिखा दिया।

मन्त्र सीखकर सुनन्द घर चला गया। आम बनाकर उन्हें बेचकर, आराम से रहने लगा।

सुनन्द के आमों में से, न जाने कैसे एक आम राजा के हाथ लगा। राजा ने चकित होकर लड़के को बुलवाया—"इस बेमौसम में, इतनी सुगन्धिवाले, और रसवाले आम तुझे कहाँ मिले? ये भगवान के बनाये हुये हैं, या आदमी के?"—राजा ने पूछा।

तब सुनन्द ने जवाब दिया—"महाराज! मुझे ये फल किसी ने नहीं दिये हैं। मुझे एक महामन्त्र मालूम है। उसकी महिमा से ही मैं ये आम बना लेता हूँ।" राजा ने स्वयं अपनी आँखों से उस मन्त्र की महिमा देखनी चाही। सुनन्द ने कहा कि उसके सामने ही वह आम पैदा कर दिखायेगा।

अगले दिन सुनन्द, राजा और उसके दरबारियों को लेकर बाग में गया। सुनन्द ने मन्त्र जल टहनियों पर छिड़का। तुरन्त पेड़ पर से आम टपकने लगे।

यह चमत्कार देखकर राजा और उसके दरबारियों के आश्चर्य की सीमा न रही। उन्होंने आमों को चुनकर खा लिया। राजा ने सुनन्द को खूब इनाम दिया।

उसके बाद राजा ने पूछा—"इस महामन्त्र को सिखानेवाला महापुरुष कौन है?"

सुनन्द को कुछ न सूझा कि क्या जवाब दे। अगर सच कहता है, तो मन्त्र का प्रभाव चला जायेगा। उसे गुरु की बात याद आ गई। मगर जो मन्त्र कंठस्थ है, उसका प्रभाव कैसे जायेगा? यह सोच उसने राजा से उस महापुरुष का नाम बता दिया। तब राजा ने उसका परिहास करते हुये कहा—"तो तूने इस महामन्त्र को एक अछूत से सीखा था? संसार में ऐश चाहने के लिये तू अपने धर्म-मार्ग से विचलित हो गया!"

सुनन्द सिर झुकाकर घर चला गया। कुछ दिन बीत गये।

फिर एक बार काशी राजा को आम खाने की इच्छा हुई।

सुनन्द हमेशा की तरह, पेड़ से सात गज़ दूर खड़े होकर मन्त्र जपने की कोशिश करने लगा। परन्तु उसे मन्त्र याद न आया। उसने फिर कोशिश की, मगर इस बार भी मन्त्र याद न आया। कई बार कोशिश की, पर वह सफल न हुआ। वह जान गया कि क्योंकि उसने अपने वचन का पालन नहीं किया था, इसलिये मन्त्र का प्रभाव चला गया है।

सुनन्द ने राजा से कहा—"क्योंकि मैंने अपने गुरु के उपदेश का पालन नहीं किया है, इसलिये मन्त्र का प्रभाव चला गया है"। वह कह सिर नीचा कर वह घर चला गया।

डरपोक युवराज

बहुत समय पहिले फारस में एक युवराज रहा करता था। वह बहुत योग्य था। पर चन्द्रमा की तरह उसमें भी एक कमी थी। वह बड़ा डरपोक था। जब वह बीस साल का हुआ, तो उसके पिता की मृत्यु हो गई। युवराज के पट्टाभिषेक के लिये तैयारियाँ शुरू हो गईं।

उस देश में एक परम्परा थी। सिंहासन पर बैठने से पहिले युवराज को शेर से लड़ना पड़ता था। इसलिए युवराज के लिये मन्त्री एक शेर को पिंजरे में रखकर पाल रहे थे। जब डरपोक युवराज उस शेर के बारे में कभी सोचता, तो उसके हाथ-पैर ठंडे पड़ जाते। इसलिये जिस दिन उसकी शेर से लड़ाई होनी थी, उससे एक दिन पहिले ही, आधी रात के समय अपने घोड़े पर चढ़, वह देश छोड़कर चला गया।

युवराज तीन दिन बाद, एक और देश में पहुँचा। उस देश में, जङ्गल, पहाड़, नदी, वगैरह बहुत सुन्दर थे। एक जगह उसको भेड़ों का झुण्ड चरता हुआ दिखाई दिया। पास ही एक गड़रिया आराम से मज़े में गाना गा रहा था।

युवराज ने उस गड़रिये से परिचय कर लिया। गड़रिया युवराज को अपने मालिक के यहाँ ले गया। उसका मालिक एक समृद्ध किसान था। उसके यहाँ बैल, भैंस, सभी कुछ थे। उसने युवराज को अच्छी तरह भोजन खिलाकर पूछा—"आप कौन हैं? आप कहाँ के हैं? कहाँ जा रहे हैं?"

"महाशय! मैं एक युवराज हूँ। मैं अपना नाम न बताऊँगा। परिस्थितियों के प्रतिकूल होने पर मुझे अपना देश छोड़कर भागना पड़ा।"—युवराज ने कहा।

श्री अतुल सकलानी

"खैर, आप हमारे घर में ही रहिये। आपको यहाँ कोई असुविधा न होगी। यह मेरी जिम्मेवारी ठहरी। आपको फिर कभी न कभी तो अच्छे दिन लौटेंगे ही।"—किसान ने कहा। युवराज ने किसान का आतिथ्य स्वीकार कर लिया। वह रोज़ गड़रिये के साथ घूमा करता। कभी पहाड़ों पर निकल जाता, कभी झरना देखने चला जाता। गड़रिये का गाना सुना करता। रोज़ जल्दी जल्दी गुज़रते जाते थे।

एक बार युवराज भेड़ों के झुण्ड के साथ एक पहाड़ी झील के पास गया। वहाँ कई और गड़रिये भी अपने भेड़ों के झुण्डों को हाँक लाये थे। वह जगह बड़ी मनोहर थी। भेड़ों के झुण्ड इधर उधर निश्चिन्त हो चर रहे थे। गड़रिये खुशी में गा रहे थे।

उसी समय दूर से आवाज़ सुनाई दी—'शेर! शेर!! पकड़ो।' जिस तरफ़ से आवाज आयी, उस तरफ़ गड़रियों ने भागना शुरू किया।

"आओ, चलो शेर को मारें"—युवराज के गड़रिये दोस्त ने उससे कहा। परन्तु युवराज को काटो तो खून नहीं। उसके मुख से बात तक न निकली। गड़रिये ने दो क्षण प्रतीक्षा की, फिर वह भी शेर का शिकार करने चला गया।

जब अंग ज़रा काबू में आये, तो युवराज अपनी जान बचाने के लिये एक पेड़ पर चढ़ गया, और पत्तों के झुरमुट में छुपकर बैठ गया। कुछ देर में गड़रिये, हँसते हँसते वापिस चले आये। मारा हुआ शेर उनके साथ था।

यह देख युवराज शर्मिन्दा हुआ। मरे हुये शेर को देखकर ही उसके हाथ-पैर सूखे पत्तों की तरह काँप रहे थे। जब भेड़ों के झुण्ड चले गये, तो वह पेड़ पर से उतर

आया। वह अपना मुँह उन गड़रियों के सामने कैसे दिखाये? इसलिये वह एक और रास्ते पर चलने लगा।

चलते चलते तीन दिन बाद वह एक जङ्गल में पहुँचा। वहाँ उसको कुछ सैनिक और उनके तम्बू दिखाई दिये। सैनिकों के सरदार ने युवराज की बड़ी खातिरदारी की। सरदार को युवराज ने अपना नाम नहीं बताया। पर जैसे उसने किसान को बताया था, वैसे ही सरदार से भी उसने कहा कि वह एक युवराज था, जिसे अपने देश को छोड़कर आना पड़ा था।

"आप हमारी फ़ौज में एक सिपाही के रूप में रहिये। आपको किसी तरह की कमी न होगी।"—सरदार ने कहा। युवराज भी उसकी बात मान गया।

युवराज को यह फ़ौजी जीवन भी पसन्द आया। जब एक दिन सिपाही घोड़े पर सवार होकर कहीं जा रहे थे, तो उन्होंने युवराज को भी बुलाया।

"आप सब लोग कहाँ जा रहे हैं?"—युवराज ने पूछा।

"पासवाले पहाड़ों में शेर हैं। उनका शिकार करने जा रहे हैं। बहुत दिनों से

युवराज ने अपने घोड़े को एक ओर रास्ते पर बढ़ा दिया। वह कुछ दिन बाद एक बड़े नगर में पहुँचा। भाटों से यह जान कि वह एक देश का युवराज है, उस देश के राजा ने उसको अपने महल में निमन्त्रित किया। उसका उसी तरह सम्मान किया, जिस प्रकार एक युवराज का किया जाता है। उसने उसको अपना अतिथि बना लिया, और कहा जबतक उसका भाग्य फिर न चमके, वह वहीं रहे।

लड़ाई नहीं हो रही है और लड़ाई के न होने पर आदमी की हिम्मत भी पस्त हो जाती है। उसका शिकार ही सबसे अच्छा इलाज है।"—सैनिकों ने कहा।

युवराज उनके साथ गये और न रह सका। परन्तु उसका दिल डर के मारे धक धक कर रहा था। युवराज आत्म-रक्षा के लिये भी शेर से लड़ न पाता था, पर ये सैनिक खोज-खाजकर उसका शिकार कर रहे थे। यह देख युवराज को वे सैनिक अति साहसी नज़र आये। ज्योंही सैनिक पहाड़ों में घुसे, तो

उस राजा के एक लड़की थी। वह सुन्दर थी और अक़्लमन्द भी। कहीं ऐसा न हो कि युवराज को कहीं फ़िक्र सताने लगे, वह उसका दिल बहलाने लगी।

उस दिन शाम को भोजनादि के बाद, जब युवराज और राजकुमारी आपस में बातचीत कर रहे थे, तो कमरे के बाहर से एक भयङ्कर आवाज़ सुनाई दी। युवराज ने पूछा—"यह आवाज़ क्या है?"

"मेरा काला नौकर अंगड़ाइयाँ ले रहा है।"—राजकुमारी ने कहा।

युवराज ने सोचा कि राजकुमारी के "काले नौकर" से मतलब शायद नीग्रो से

था। एक मनुष्य के, और वह भी एक नौकर के इस प्रकार अंगड़ाई लेने से राजकुमारी को गुस्सा न आता देख, युवराज को बड़ा आश्चर्य हुआ।

फिर राजकुमारी ने कहा—"सोने का समय हो गया है, जाकर सोइये। मुझे भी नींद आ रही है।" उसने उठकर किवाड़ खोला। तब झट युवराज का दिल थम-सा गया। किवाड़ के पीछे एक बड़ा काला शेर बैठा हुआ था।

"शेर, शेर,"—युवराज भयभीत हो चिल्लाने लगा।

"डरिये मत! क्या आपको नहीं मालूम कि अगर आपने अपना डर दिखाया, तो जङ्गली जानवर हमला करते हैं! यह मेरा पालतू शेर है। यह कुछ नहीं करेगा। हमेशा मेरे पीछे पीछे ही फिरता रहता है।" कहती कहती राजकुमारी शेर का सिर सँवारने लगी।

पर रात को युवराज एक क्षण भी न सोया। उसने मालूम कर लिया कि उसकी हालत भय के कारण बुरी थी, न कि शेरों के कारण। गड़रियों ने शेर मारा था, सिपाहियों ने शेर का शिकार खेला था,
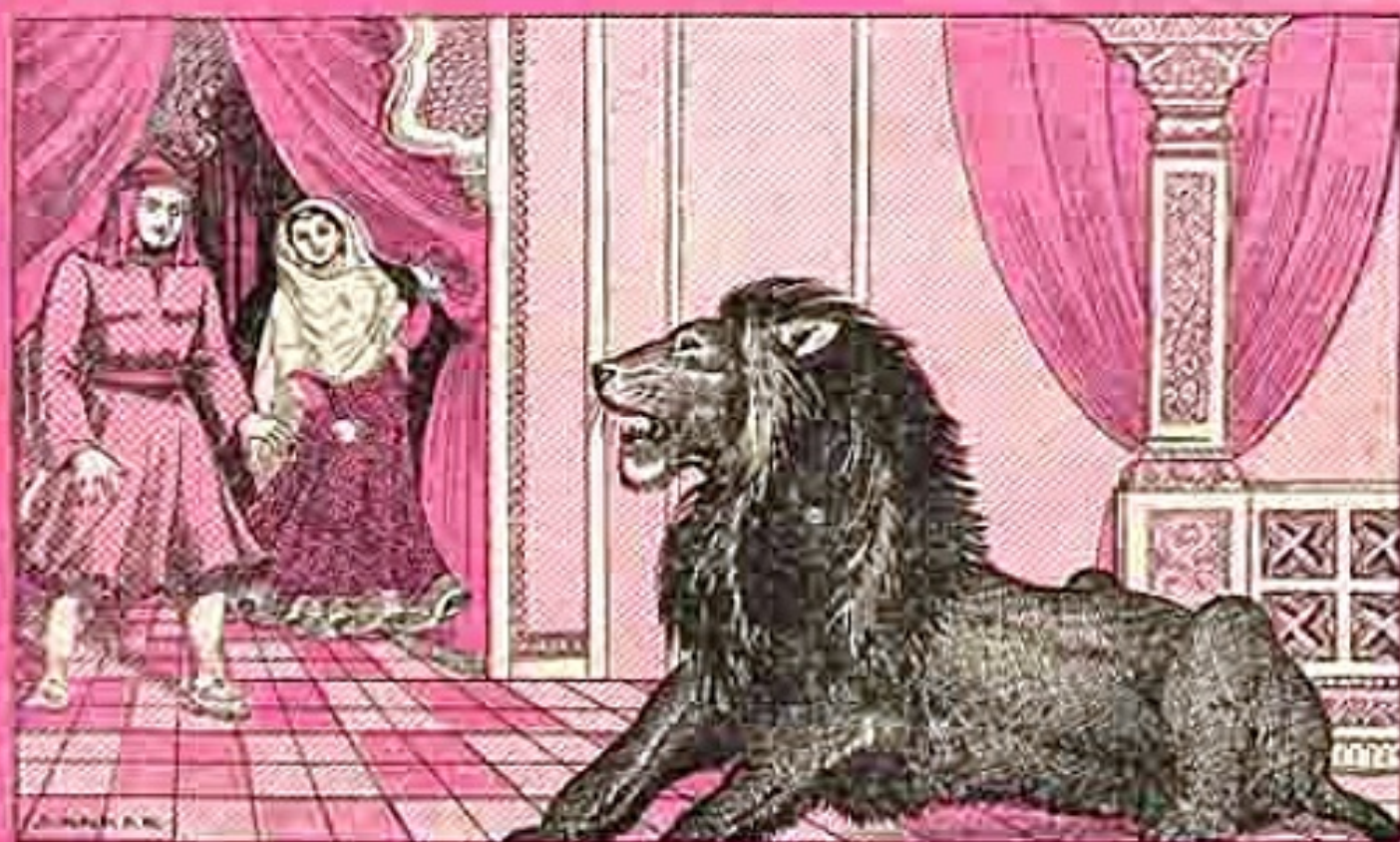
राजकुमारी शेर स्वयं पाल रही थी। उन्हें "भय" का रोग नहीं है, जबकि उसे है। बस इतना ही भेद है। भय न हो, तो शेर तो अलग, कोई भी उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकता।

जब उसको यह बात मालूम हो गयी, तो पौ फटने से पहिले, अपने घोड़े पर चढ़ वह अपने देश को चला गया। मन्त्री, राज-बन्धु आदि, जो उसका ठिकाना नहीं जान पाये थे, उसको देखकर बड़े सन्तुष्ट हुये।

"मैं शेर से लड़ूँगा। प्रबन्ध कीजिये।"— युवराज ने कहा। अगले दिन युवराज के लिये सिंह-युद्ध का इन्तज़ाम किया गया। एक कमरे में युवराज तलवार निकालकर खड़ा हो गया। उस कमरे के दरवाज़े पर शेर का पिंजरा लाकर रखा गया।

पिंजरे के खोलते ही शेर गरजता हुआ कमरे में कूदा। युवराज न हिला, न डुला। शेर उसके चारों ओर घूमा, और उसी की बगल में बैठकर उसका हाथ चाटने लगा। वह पालतू शेर था। यह बात मन्त्रियों ने युवराज को न बताई थी। युवराज ने अपने साहस का परिचय दिया। उसके बारे में अब किसी को सन्देह न था। परम्परा भी पूरी हो गई थी।

तुरंत पट्टाभिषेक के लिये निमन्त्रण पत्र भेजे गये। किसान, गड़रिया, जङ्गल में ठहरे हुये सेनापति, सैनिक, राजा, और उसकी लड़की को भी निमन्त्रण भेजा गया।

जब सब युवराज के लिये अपने भेंटों की घोषणा कर रहे थे, तब राजा ने कहा— मैं और कोई भेंट तो नहीं लाया हूँ; मैं अपनी लड़की को ही लाया हूँ। उसको स्वीकार कीजिये।"

युवराज राजकुमारी से विवाह कर बहुत दिनों तक सुख से राज करता रहा।

प्रत्युत्पन्नमति

पहिले दण्डकारण्य में शेरों का बहुत डर था। वे आते-जातों को मार दिया करते, और उनके धन आदि को लेकर गुफ़ा में छुपा दिया करते थे।

दण्डकारण्य के पास एक गाँव था। उस गाँव में एक नाई रहा करता था। होने को तो वह गरीब था, पर बहुत ही चुस्त, चालाक, और हिम्मती था। क्योंकि शेर दिन में सोते हैं, इसलिये उसने सोचा कि दिन में जङ्गल जाकर, उनके मारे हुये लोगों का रुपया-पैसा क्यों न खोजा जाय?

एक दिन नाई ने अपनी पेटी बगल में रखी। उस्तरा भी लिया, ताकि मुसीबत में काम आ जाय। वह जङ्गल में गया। थोड़ी दूर जाने पर, पेड़ के पीछे से एक शेर सामने आया।

नाई प्रत्युत्पन्नमति तो था ही, देखते ही, निडर हो उसने कहा—"आहा! तू अब मिल गया है? मैं तेरे लिये ही देख रहा था। घबराना मत। मैं तुझे मारूँगा नहीं। तेरी मूँछें राजा को चाहियें। सिर्फ़ मूँछें काटूँगा। राजा मुझे इनाम देगा।"

शेर डर गया।

"बाबू! मेरी मदद करो। अगर मेरी मूँछें ही न रहीं, तो मुझे पूछेगा कौन? जो राजा तुम्हें देंगे, वह मैं ही दिये देता हूँ।"—शेर ने उससे मिन्नत की।

"ख़ैर, जाने दो। तू इतनी मिन्नत कर रहा है। जो कुछ तू चाहता है, वही तू कर।"—नाई ने कहा। शेर उसको एक गुफ़ा में ले गया और उसने वहाँ उसे पैसों की थैली दिखाई। नाई उस थैले को लेकर अपने रास्ते पर चला गया।

श्री के. आर. अरविन्द

जब नाई थैली खोलकर पैसे गिन रहा था, तो वहाँ एक लकड़हारा आया। नाई ने जो कुछ गुज़रा था, उसे कह सुनाया। वह भी शेरों का पैसा हथियाने के लिये अपनी कुल्हाड़ी लेकर जङ्गल में पहुँचा।

जब वह घने जङ्गल में गया, तो उसे भी एक शेर दिखाई दिया।

"अरे हाँ, तो मिल गया! ज़रा ठहर तो! तेरा सिर काटकर मैं राजा को अगर भेंट दूँगा, तो मुझे बहुत इनाम मिलेगा।"—कहते हुये कुल्हाड़ी लेकर लकड़हारा शेर पर लपका। शेर डर गया।

"बाबू! मेरे प्राण बचा। राजा जो इनाम देगा, मैं तुझे उससे ठीक दुगना दे दूँगा।"—शेर गिड़गिड़ाया।

"अच्छा, तो देखूँ, कितना देता है! चलें,"—लकड़हारे ने कहा।

शेर उसको अपनी गुफ़ा में ले गया और उसको गहने-जेवरों का एक ढेर दिखाया। लकड़हारा उन गहनों का एक गट्ठर बांध घर ले गया।

यह वृत्तान्त सुनते ही, नाई को फिर लालच हुआ। उसने लकड़हारे से कहा—"मामा! इस तरह एक एक शेर को डराने से हमारा काम न चलेगा। अगर हमने सब शेरों को डरा दिया, तो सात पीढ़ियों तक हमें गरीबी न सतायेगी। तुम क्या कहते हो!"

लकड़हारा नाई के समान हिम्मती न था। पहिले तो वह डरा, परन्तु नाई के ढाढ़स दिलाने पर वह मान गया। दोनों मिलकर दूर जङ्गल में गये, और पेड़ों पर चढ़कर शेरों की इन्तज़ारी करने लगे।

इधर शेरों ने एक सभा बुलाई।

"दो आदमियों ने दो शेरों को डरा-धमकाकर उनका धन हथिया लिया है।

क्या हमें मनुष्य से डरना चाहिये! अगर मनुष्यों से हमारा मुकाबला किया जाय, तो हम कितने शक्तिशाली हैं! कितने भयंकर हैं!"—नौजवान शेर गरजे।

परन्तु एक शेर ने इस प्रकार कहा—

"भाइयो! आप कभी इस भ्रम में न रहिये कि हम ही इस दुनियाँ में सब से अधिक क्रूर, भयङ्कर, और शक्तिशाली हैं। धन-लोलुप मनुष्य से बढ़कर इस संसार में अधिक क्रूर और कोई नहीं है। इसलिये मेरी यह सलाह है कि हम अब से अकेला घूमना-फिरना छोड़ दें। झुण्ड-झुण्ड में ही हमें मिलकर रहना चाहिये। एकता ही हमारी रक्षा करेगी।"

सभा के समाप्त होने पर, शेर उसी तरफ़ आने लगे, जिस तरफ़ नाई और लकड़हारे बैठे हुये थे। जब लकड़हारे ने इतने शेरों को एक साथ देखा, तो उसके कपड़े पसीने से तर हो गये। उसके हाथ टहनी से फिसल पड़ा और वह नीचे गिरने लगा।

इस समय नाई को एक चाल सूझी—प्रत्युत्पन्नमति तो वह था ही। "पकड़ो, उन शेरों को! पकड़ो! एक को भी न भागने देना"—वह ज़ोर ज़ोर से चिल्लाने लगा।

उसका चिल्लाना सुन और टूटी टहनियों पर से एक आदमी को गिरता देख, शेर बुरी तरह डर गये। उन्होंने न आगे देखा न पीछे, सिर पर पैर रखकर इधर उधर अन्धा-धुन्ध, ज़ोर से भागने लगे। बाद में नाई पेड़ पर से उतर आया।

दोनों तब पहाड़ में शेरों की गुफाओं की तलाश में निकले। उन दोनों ने वहाँ रखे गहने, जेवरों को लेकर आपस में बाँट लिया। क्योंकि उन दोनों ने शेरों का डर दूर कर दिया था, इसलिये उन्हें बुलाकर राजा ने इनाम दिया।

परम लोभी

पहिले कभी रूस में मार्का नाम का एक रईस रहा करता था। उसके सरीखा लोभी संसार में शायद कोई नहीं था—लोगों का कम से कम यही ख्याल था। जब वह एक बार गली में जा रहा था, तो एक बूढ़े ने सामने आकर पुछा—"दो पैसे दीजिये, बाबू!"

मार्का ने भिखारी के रोने को तो नहीं सुना, पर उसने यह देखा कि एक गरीब किसान ने, जो उसके पीछे चला आ रहा था, जेब में से दो पैसे निकालकर उसको दे दिये और वह उसके आगे जा रहा था।

यह देख मार्का शर्मिन्दा हुआ। उसने रुककर किसान से कहा—"देखना ज़रा! मेरे पास इस समय टूटे पैसे नहीं हैं। भिखारी को दो पैसे देने हैं। क्या तू दो पैसे उधार दे सकेगा? यह तो तुझे मालूम ही है कि मैं कौन हूँ?"

मार्का को दो पैसे देते हुये गरीब किसान ने कहा—"अच्छा हुजूर! तो दो पैसे लेने के लिये मैं कब आपके यहाँ हाज़िर होऊँ?"

"कल आना!"—मार्का ने कहा।

अगले दिन गरीब किसान मार्का के घर गया। उसको देखते ही मार्का ने कहा—"दो पैसे के लिये आया है? मेरे पास इस वक्त भी टूटे पैसे नहीं हैं। कल आना!"

अगले दिन वह गरीब किसान फिर गया।

"अरे हाँ! तू आ तो गया, पर मेरे पास अब भी टूटे पैसे नहीं हैं। अच्छा तो एक काम कर। देख! तेरे पास निन्यानबे रुपये, साढ़े पन्द्रह आने हो तो दे। तब मैं तुरन्त सौ रुपये का नोट दे दूँगा।"—मार्का ने कहा।

श्री विजयकुमार श्रीवास्तव

गरीब किसान ने कहा कि उसके पास उतना पैसा नहीं है।

"ऐसी बात है तो दो हफ़्ते बाद दिखाई देना"—मार्का ने कहा।

गरीब किसान फिर दो सप्ताह बाद उसके पास पहुँचा। उसको कुछ फ़ासले पर देख मार्का ने अपनी पत्नी से कहा—देख, मैं चटाई पर लेट जाता हूँ। मेरे सिर पर कपड़ा ढांप दे, और सिरहाने दिया जला दे। मेरे लिये गरीब किसान आ रहा है। उससे कह देना कि मैं सबेरे मर गया था। उससे इस तरह पिंड छूटेगा। मार्का ने जो कुछ कहा, पत्नी ने कर दिखाया। जब गरीब किसान आया, तो उसने कहा—"तेरी याद करते करते ही गुज़र गये।"

"जाते जाते, वह मेरा कर्ज़ लेता ही गया। मगर अब क्या किया जाय? खर्च में थोड़ा खर्च और ही सही। उसका अन्त्येष्टि-संस्कार मैं ही करा दूँगा। शव को स्नान कराना है।"—किसान ने कहा। वह आंगन में गया, और बाल्टी में उबलता हुआ पानी ले आया। पानी को मार्का पर उड़ेल दिया। मार्का ने जलन के मारे पैर हिलाये।

"पैर हिलाने से काम नहीं चलेगा! कम से कम अब मेरे दो पैसे वापिस दोगे कि नहीं?"—गरीब किसान ने पूछा। मार्का ने कोई जवाब नहीं दिया। "शव ले जाने के लिये ताबूत तो मँगाइये।"—किसान ने कहा। मार्का की पत्नी ने बिना चूँ चाँ किये, ताबूत मँगाया। किसान ने मार्का को ताबूत में रखा, और गिरजे में ले गया। रात तक स्नान आदि कराता हुआ, वह वहीं रहा।

आधी रात के क़रीब गिरजे में चोर आये। उनकी आहट सुनकर किसान एक मूर्ति के

पीछे छुप गया। चोर कहीं से जवाहरात, पैसे वगैरह चुरा लाये थे। वे आपस में बँटवारा कर रहे थे। सब कुछ तो उन्होंने बाँट लिया, पर एक तल्वार रह गई, जिसकी मुठिया सोने की बनी हुई थी।

चोर यह तय न कर पाये कि उसको कौन लें। वे झगड़ने लगे।

"तल्वार को लेकर तुम क्यों लड़ते हो! इस तल्वार से जो इस ताबूत में रखे शव का गला काट सकेगा, तल्वार उसी की है।"—गरीब किसान ने मूर्ति के पीछे से कहा।

यह बात सुनते ही मार्का के प्राण पखेरू उड़ गये—"अरे बाप रे बाप! मेरा गला!"—यह ज़ोर से चिल्लाया। यह देख चोर घबरा गये। वे धन को छोड़-छाड़, प्राण बचा, वहाँ से जा भागे। किसान मूर्ति के पीछे से बाहर आया।

"देखो भाई। जो हो गया सो हो गया। हम और तुम झगड़कर क्या करेंगे? हमारे भाग्य अच्छे हैं, तभी तो हमें इतना रुपया-पैसा मुफ़्त मिल रहा है। आओ बिना किसी तीसरे आदमी के जाने, आपस में बराबर बराबर बाँट लें।"—मार्का ने गरीब किसान से कहा।

गरीब किसान मान गया। चोरों की छोड़ी हुई धन-राशि को उन्होंने आपस में बराबर बाँट लिया।

"आओ अब चलें!"—मार्का ने कहा।

"तो फिर मेरे दो पैसे के बारे में क्या कहते हो?"—गरीब किसान ने पूछा।

"तुम देख ही तो रहे हो? मेरे पास छुट्टे पैसे कहाँ हैं! कल ज़रूर आना, दे दूँगा।"—मार्का ने कहा।

कल कल करके बहुत दिन गुज़र गये। पर मार्का ने गरीब किसान को दो पैसे वापिस न दिये।

भाग्य-दुर्भाग्य

भुवनगिरि में दो भाई रहा करते थे। दोनों का विवाह हो गया था। बड़े भाई ने गरीब घराने में शादी की थी। छोटे भाई का एक रईस की लड़की से विवाह हुआ था। इस कारण उनकी पत्नियों में कभी न बनती थी। जब जेठानी कहा करती—"मैं बड़ी हूँ, इसलिये तुम्हें मेरी बात सुननी चाहिये", तब छोटे भाई की पत्नी कहती—"मैं रईस घराने की हूँ, इसलिये तुम्हें मेरी बात पर चलना चाहिये।"

जब पत्नियों में तीन छः का रिश्ता रहता, तो भला भाई भी कैसे चैन से रहते? उन दोनों में भी बँटवारा हो गया। परन्तु बड़े भाई की हालत जल्दी ही गरीबी के कारण खराब हो गयी। क्योंकि उसके बाल-बच्चे अधिक हो गये थे, और साथ साथ खर्च भी बढ़ते गये थे। परन्तु छोटे भाई के भाग चमक उठे। उसके हाथ में मिट्टी भी सोना हो जाती।

एक बार बड़े भाई ने छोटे भाई के पास आकर कहा—"खेत में हल चलाना है। ज़रा तुम अपने बैल दे सकोगे?"

"आज एक जोड़ी ले जाना, कल दूसरी ले जाना। बैलों को पीटना-पाटना नहीं, ज़रा सम्भल कर। बैल खेत में ही हैं। कहना कि मैंने कह दिया है, और बैल ले जाना"—छोटे भाई ने कहा।

जब बड़ा भाई खेत में गया, तो उसको आश्चर्य हुआ। भाई के बैलों को जोतकर कोई हल चला रहा था।

"यह मेरे भाई की ज़मीन है। तुम कौन हो? क्यों यहाँ हल जोत रहे हो?"—बड़े भाई ने पूछा।

श्री सुरेशचन्द्र बागची

"क्या तुझे नहीं मालूम! मैं तेरे छोटे भाई का "भाग्य" हूँ। इसीलिये जब तेरा भाई आराम से बैठा है, मैं उसके खेत में हल चला रहा हूँ।"—उसने कहा।

"तब मेरा 'भाग्य' क्या हुआ!"—भाई ने पूछा।

"उसका क्या कहना! वह तो आलसी है। देख, वह पेड़ के पीछे पड़ा सो रहा है। इसीलिये तेरी यह हालत है।"—छोटे भाई के भाग्य ने कहा।

"तो यह इसकी करतून है!" कहते हुये उसने इमली की पतली बेंत उठाई, और खौलता हुआ, पेड़ के पीछे गया, और मज़े में सोते हुये अपने "भाग्य" को देखा।

जब दो बेंतें लगीं, तो भाग्य उठ खड़ा हुआ—"मुझे क्यों फ़िज़ूल पीट रहा है? मैंने तेरा क्या बिगाड़ा है?"

"और क्या करेगा? जब तेरा साथी-मेरे भाई का भाग्य, हल जोत रहा है, तो तू आराम से यहाँ पड़ा सो रहा है!" बड़े भाई ने फिर बेंत उठाई।

"ठहर ठहर! मुझे खेती करना बिल्कुल नहीं आता। व्यापार की बात कर और तब देखना मेरी करामात।"—भाग्य ने कहा।

"व्यापार? पर मेरे पास पूँजी कहाँ है? मैं भला क्या व्यापार कर सकता हूँ?"—भाई ने कहा।

"जब मैं तेरे साथ हूँ, तो पूँजी की क्या ज़रूरत है? पुराने कपड़ों का व्यापार करना, या मिट्टी का व्यापार, चाहे जो भी व्यापार कर, तू देखेगा कि घर में लक्ष्मी नाचेगी। तू अपना बोरिया-बिस्तरा बाँध और शहर चल पड़"—भाग्य ने कहा।

जब भाई शहर की ओर जा रहा था तो उसके घर की छत पर से किसी के रोने की आवाज़ आई। भाई ने सिर

उठाकर देखा, तो कोई भौंड़ी, बदसूरत बूढ़ी औरत छत से लटक रही थी।

"तुम कौन हो? तुम क्यों रो रही हो? यहाँ कब आई थी?"—भाई ने पूछा।

"अरे बाप रे बाप! मैं शुरु से ही इस घर में आश्रय लिये हुये हूँ। मैं तुम्हारा 'दुर्भाग्य' हूँ। अब तक मेरी अच्छी गुज़र हो गई थी। क्या तुम मुझे छोड़कर जाओगे?" वह बुढ़िया ज़ोर से रोने लगी।

'अरे तू है—मौसी? अगर तू हमारे साथ नहीं आयेगी, तो भला हमें क्या सूझेगा? आ, इस सन्दूक में बैठ, साथ ले जाऊँगा।" उसने सन्दूक खाली कर दिया और 'दुर्भाग्य' सन्दूक में आराम से बैठ गया। उसने सन्दूक बन्दकर ताला लगा दिया। आंगन में एक गढ़ा खोदा और उसमें संदूक रखकर कहा—"हमेशा, यहीं पड़ा रह। अगर तू ने फिर दिखाई दिया, तो तेरी चमड़ी उखाड़ दूँगा।" पत्नी और बाल-बच्चों के साथ वह शहर चला गया।

शहर में वह पुराने कपड़े बेचने लगा। भाग्य ने साथ दिया और पुराने कपड़ों के दाम बढ़ गये। जो धन पुराने कपड़ों के बेचने से मिला, उसे नये कपड़ों को खरीदने में लगाया, और उसे बेचकर उसने अच्छा पैसा बनाया। देखते देखते वह रईस हो गया।

जब छोटे भाई ने सुना कि बड़ा भाई धनी हो गया है, तो वह उसको देखने गया।

"भाई! तुमने इतने थोड़े समय में इतना पैसा कैसे कमाया!"—भाई ने कहा।

"इसमें क्या रखा है! मेरे घर में 'दुर्भाग्य' छत से लटक रहा था। उसको मैंने पकड़ लिया, और सन्दूक में रख, आँगन में कूँए के पास गढ़ा खोदकर दबा दिया। तब से भाग्य मेरा साथ दे रहा है।"—बड़े भाई ने कहा।

बड़े भाई के वैभव, सौभाग्य को देखकर छोटा भाई जल उठा। वह भाई के घर गया, और संदूक को गढ़े में से निकालकर ताला तोड़ा, और 'दुर्भाग्य' को बाहर निकाला। सन्दूक के खोलते ही 'दुर्भाग्य' ने कहा—'आ गये बेटा!' वह छोटे भाई के कंधे पर जा बैठा।

"मैं तेरा बेटा नहीं हूँ। उतर, उतर मेरा भाई शहर में है!"—छोटा भाई उसके सामने गिड़गिड़ाने लगा।

"उस अभागे का नाम मेरे सामने मत ले। तू ही अच्छा है। तेरा कितना अच्छा दिल है। तुझ में कितनी दया है! मैं हमेशा तेरे पास ही रहूँगा।"—दुर्भाग्य ने कहा।

बड़े भाई की अच्छी हालत देख ईर्ष्या करने के कारण उसको अच्छी सज़ा मिली। वह अपने कंधे पर से 'दुर्भाग्य' को न उतार सका। वह उससे अपना पिंड न छुड़ा सका। जल्दी ही उसकी सारी ज़मीन-जायदाद बरबाद हो गई। जब वह ससुराल गया, तो वहाँ लोगों ने उसकी परवाह न की। कुछ दिनों बाद वह बिना किसी को कहे, वैरागी बनकर कहीं चला गया।

सूर्य

आकाश में हमें जो नक्षत्र दिखाई देते हैं, उन में सूर्य भी है। नक्षत्रों को भी हम और सूर्यों की तरह मान सकते हैं। चूंकि सूर्य और नक्षत्रों से अधिक समीप है, इसलिये इसका प्रकाश हमें अधिक मालूम होता है। हम इस सूर्य के बारे में कुछ विवरण यहाँ देते हैं :

* जब सूर्य भूमि के पास होता है, तो इन दोनों में ९ करोड़ १४ लाख ६ हज़ार मील का फ़ासला होता है। १,८६,००० मील हर सेकण्ड की गति से इसके प्रकाश को भूमि तक पहुँचने के लिये आठ मिनट लगते हैं।
* सूर्य का व्यास ८,६७,००० मील है। उसकी सतह का वैशाल्य २३० हज़ार वर्ग मील है—भूमि से बारह हज़ार गुना अधिक।
* सूर्य की परिधि ३४०० अरब मील है—भूमि से १३ लाख गुना अधिक। भार २० लाख अरब गुना—भूमि से ३,३३.००० गुना अधिक।
* गुरुत्वाकर्षण शक्ति जैसे भूमि पर है, वैसे सूर्य में भी है। उसकी शक्ति भूमि से २८ अधिक है। यानी अगर कोई चीज़ यहाँ पाँच सेर तुलती है, तो वह सूर्य में २८ गुना अधिक हो जाती है।
* भूमि के समान सूर्य भी अपने चारों ओर घूमता है। उसे आत्म-प्रदक्षिणा के लिये २५ रोज़, ७ घंटे, ४८ सेकण्ड लगते हैं। प्रदक्षिणा की गति, मध्य भाग में ४,४८७ मील फ़ी घंटा है।
* सूर्य की सतह पर करीब करीब, १०,००० डिग्री गरमी होती है। सूर्य की रोशनी डेढ़ करोड़ करोड़, करोड़ मोम बत्तियों के बराबर है।
* सूर्य एक अग्नि-पिंड है। इसकी लपटें आकाश में २८६,००० मील की ऊँचाई तक पहुँचती हैं। जब भूमि और सूर्य के बीच में चन्द्रमा आता है, तो सूर्य पर ग्रहण लगता है। चाँद की आड़ में सूर्य की लपटें दृष्टिगोचर भी होती हैं

रंगीन चित्र - कथा : चित्र - ५

तब पंखोंवाले घोड़े को रानी पर दया आई। उसने मनुष्यों की भाषा में कहा—"रानी, तुम छोटी-सी बात के लिये इतनी मिन्नत क्यों कर रही हो ! मैं तुम्हें लाल किले में ले जाऊँगा। फ़िक्र न करो।" घोड़े ने रानी को आश्वासन दिलाया।

उन्होंने रात भर वहाँ विश्राम लिया। तब पीठ पर रानी को बिठाकर आकाश मार्ग से घोड़े ने दौड़ प्रारम्भ की। उतने ऊपर उतनी तेज़ी से जाते हुये रानी को संसार की अनेक विचित्र विचित्र चीज़ें दिखाई देने लगीं।

परन्तु रानी के मन की हालत ऐसी न थी कि इन विचित्र चीज़ों को देखकर आनन्दित हो सके। उसको तो यह फ़िक्र सता रही थी कि लाल किला कैसे पहुँचा जाय, कब पहुँचा जाय, और कैसे पति से मिला जाय ! उसको और कुछ न सूझ रहा था।

जब रानी घोड़े की पीठ पर चढ़ी उड़ी जा रही थी, तो उसको चीथड़ों से तन ढापे एक गरीब स्त्री दिखाई दी। रानी के मन से तुरंत बिजली की तरह एक ख़्याल आया। उसने घोड़े से यों कहा—

"ए अश्वराज ! मैं अब पति के दिये हुये कीमती वस्त्र पहने हुए हूँ। कोई भी आसानी से जान सकता है कि मैं कौन हूं। अतः अच्छा तो यह होगा कि मुझे इस हालत में कोई न पहिचाने। इसलिये मैं अपने कपड़े उस गरीब स्त्री को देकर उसके कपड़े पहिनना चाहती हूँ।"

घोड़े ने रानी की बात मान ली, और वह तुरंत ज़मीन पर उतर गया। तब रानी ने अपनी कीमती पोशाक और गहने उस बुढ़िया को दे दिये और उसके चीथड़े और साधारण गहने रानी ने लेकर पहिन लिये।

वेष बदलकर रानी फिर घोड़े पर चढ़ गई। दिन भर सफ़र करने के बाद वे अमलतास के जङ्गल में पहुँचे। उसे जङ्गल में उन्हें आकर्षक लाल किला साफ़ साफ़ दिखाई दिया। तब घोड़े ने रानी से कहा—"हम अपने गम्यस्थान पर पहुँच गये हैं।" रानी बहुत खुश हुई।

फोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

जून १९५५ :: पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें।

ऊपर के फोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिख कर निम्नलिखित पते पर भेजनी चाहिये।

फोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन
वडपलनी :: मद्रास - २६

अप्रैल - प्रतियोगिता - फल

अप्रैल के फोटो के लिये निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं। इनके प्रेषक को १० रु. का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फोटो : **संभलकर चलना!** दूसरा फोटो : **कहीं गिर न पड़े?**

श्री तेजेश्वर शर्मा, राजतिलक भवन, सिरोही (राजस्थान)

समाचार वगैरह

आजकल खुदाई के काम बड़े ज़ोर-शोर से कई जगह हो रहे हैं। अम्बाला के पास कुछ अवशेष पाये गये हैं, जिनका सम्बन्ध मेहन्जोदरो आदि से है। ये अवशेष भारत के प्राचीन इतिहास का काम करते हैं।

मिर्ज़ापुर के अष्टभुजा पहाड़ी में महामाया लक्ष्मीदेवी का मन्दिर पाया गया है। ऐतिहासिकों का कहना है कि मन्दिर २००० वर्ष पुराना है। यह मन्दिर बौद्धकाल से भी पूर्व का समझा जाता है।

• • •

पिछले दिनों देश में काफ़ी राजनैतिक उथलपुथल बनी रही। सुदूर दक्षिण—ट्रावनकोर और कोचिन राज्य—में श्री थानु पिल्लै के मन्त्रिमण्डल का पतन हुआ। यह प्रथम मन्त्रिमण्डल था, जो प्रजा सोशलिस्ट पार्टी की तरफ़ से स्थापित हुआ था।

दिल्ली में श्री चौधरी ब्रह्मप्रकाश का मन्त्रिमण्डल भी बहुत कुछ खींचातानी के बाद गिरा। श्री गुरुमुख निहालसिंह के नेतृत्व में नया मन्त्रिमण्डल बन गया है, जिसमें श्री चौधरी ब्रह्मप्रकाश भी हैं।

भारत के सब से नये राज्य आन्ध्र में निर्वाचन हुआ। यह प्रकाशम मन्त्रि-मण्डल के पतन के फलस्वरूप हुआ था। आन्ध्र का यह पहिला निर्वाचन

था। इस निर्वाचन में कम्यूनिस्ट पार्टी और कांग्रेस की शक्ति कसौटी पर थी।

*　*　*

भोपाल के पास एक विचित्र घटना घटी। चार लड़के साइकिल पर घूमने जा रहे थे। उन्होंने रास्ते में चार साँपों को फन उठाये देखा। लड़कों को देखते ही साँपों ने पीछा किया। तीन लड़के तो भाग गये। पर एक लड़का जब थककर साइकिल से उतरा तो साँप उसके पीछे थे। एक साँप ने प्रहार किया। पर लड़का बाल बाल बच गया। साइकिल के हिलने-फिराने से साँप टायर के नीचे कुचल गया। दूसरे दिन साँप ने लड़के का गाँव तक पीछा किया। वहाँ गाँववालों ने लाठी से मारकर साँप का खातमा कर दिया।

श्री नेहरू राष्ट्रमण्डल की एक सभा में उपस्थित होने के लिये लंदन गये। सभा में कोई महत्वपूर्ण निश्चय नहीं किया गया। इस सभा का उद्देश्य राष्ट्र मण्डल के सदस्यों को निकट लाना ही था। भारत भी राष्ट्र मण्डल का सदस्य है।

•　•　•

अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति ऐसी बदल रही है कि आशंका की जाती है कि कहीं युद्ध फिर न शुरू हो जाये।

प्रशान्त सागर में चीन और अमेरीका के बीच, फारमोसा को लेकर तनातनी चल रही है। कई द्वीपों पर बमबारी भी हुई।

युद्ध का निवारण करने के लिये संसार के शान्तिप्रिय राष्ट्र—जिनमें भारत भी प्रमुख है, प्रयत्नशील हैं।

चित्र - कथा

वास और दास एक दिन खरबूजे के खेत में गये। खरबूजे काटकर उन्होंने थैली भर लिये। "अरे इतने खरबूजे ढो नहीं सकूंगा, दो चार निकाल दे"—वास ने कहा। पर दास डींग मारने लगा। बेसिर-पैर की कहने लगा।

"अरे दास! देख मैं नाक पर खरबूजे रख उस तरफ़ को पारकर जाऊंगा। देख मेरा कारनामा। लगा शर्त।"—कहते कहते उसने एक कदम रखा। दूसरा कदम रख ही रहा था कि वह एक तरफ़ गिरा और दूसरी तरफ़ उसका खरबूजा।

"ढकोसलेबाजी की यही सजा है"—वास ने हँसते हुये कहा।

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press Ltd., Madras 26, and Publ'shed by him for Chandamama Publications, Madras 26. Controlling Editor: SRI 'CHAKRAPANI'

Photo by B. Bhansali
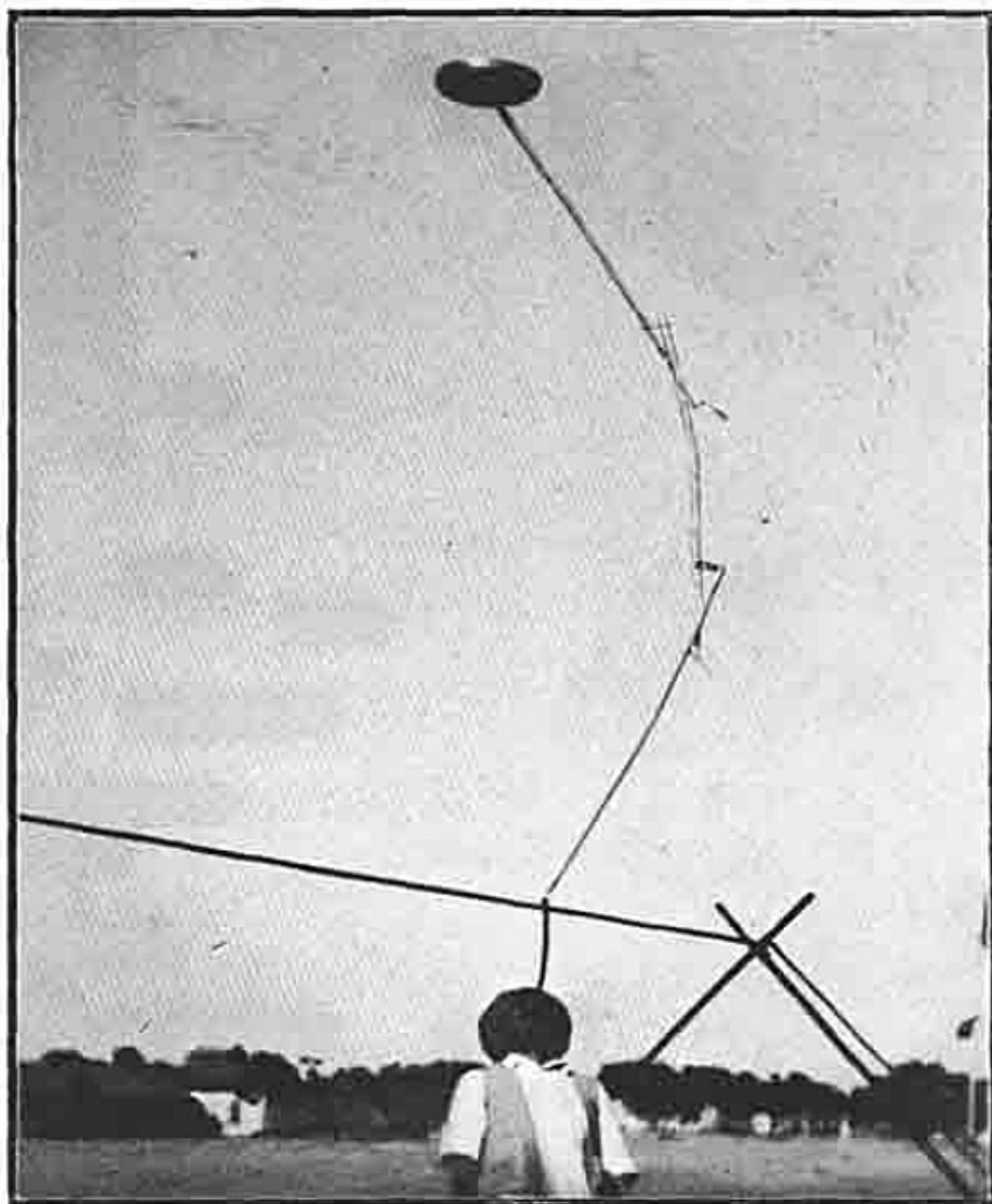
पुरस्कृत
परिचयोक्ति

कहीं गिर न पड़े ?

प्रेषक
तेजेश्वर शर्मा, सिरोही

CHANDAMAMA (Hindi) APRIL 1955 Regd. No. M. 5452

रङ्गीन चित्र-कथा, चित्र – ५